

एक क्रांतिकारी के संस्मरण

—प्रिंस क्रोपॉटकिन का रेखाचित्र और संस्मरण—

१९५७

सत्साहित्य प्रकाशन

प्रकाशक

मॉडर्न उद्योग

मंत्री, रक्षा नाटिक मण्डल,

नई दिल्ली

पहली बार : १९५७

मूल्य

वारह आना

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स,
दिल्ली

प्रकाशकीय

क्रोपॉटकिन के नाम से हिंदी के पाठक भली-भांति परिचित हैं। वह रूस के महान् क्रान्तिकारियों में से थे, पर उनकी क्रान्ति कोरमकोर तोड-फोड की क्रान्ति नहीं थी। वह ऐसी थी, जो धीरे-धीरे अपना प्रभाव डालती है और व्यक्ति तथा समाज के मूल्यों को बदल देती है। वे उच्च कोटि के वैज्ञानिक तथा चिंतक भी थे। उनकी अनेक रचनाएँ उपलब्ध हैं, जिनमें बड़ी महत्वपूर्ण विचार-सामग्री प्राप्त होती है।

हाल में क्रोपॉटकिन की एक पुस्तक 'मण्डल' में प्रकाशित हुई है—'क्रान्ति की भावना'; और भी उनकी कई किताबें 'मण्डल' से निकल चुकी हैं। इस पुस्तक में उनकी आत्म-कथा ('दी मेमोयर्स ऑफ ए रिवोल्यूशनरिस्ट') के आधार पर उनके मन में रहनेतक की जीवनी का सार दे दिया गया है। एक रेखा-चित्र में उनके पूरे जीवन पर भी प्रकाश डाला गया है। साथ में उनके जेल से भागने का वृत्तांत भी उनकी आत्म-कथा में से दिया गया है, जो इतना रोचक और रोमान्चकारी है कि पढ़कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

आशा है, पाठकों को इस पुस्तक में कुछ नूतनता मिलेगी और वे इसके प्रसार में सहायक होंगे।

विषय-सूची.

	पृष्ठ
१. प्रिम क्रोपांटकिन : रेखानित्र	५
२. नम्करण	१८
३. से जेल मे कैमे भागा ? —क्रोपांटकिन	७३



एक क्रांतिकारी के संस्मरण

: १ :

प्रिंस क्रोपॉटकिन : रेखा-चित्र

“जनाव व्लादीमीर इलियच (लेनिन), जब आपको आयादा तो यह है कि हम एक नवीन मन्थ के मगीहा बने और नवीन राज्य के मन्थाण, तो फिर आप किम प्रयाण ऐंसे बीभत्स मन्कारी जनाचारों और मैन-मनामिद सरकारी तीर-नगीको को अपनी स्वीकृति दे मचने हैं. जैनेकि रिगी अणगण के लिए अपगधी के नाने-गिधतेदारों को गिरणनार कर देना ? इनने में ऐंसा प्रतीत होता है कि आप जाग्याही के विचारों मे चिपके हुए हैं। पर शायद उन निरपराध आदमियों को पकडार आप अपनी जान की रक्षा मरना चाहते हैं। क्या आप उनने अर्धे होगए है और अपनी नानासाहों के विचारों के इत्तन गुलाम बन गए है कि आपको यह बात नही मूलती कि आप-सैम मरीगिरन साम्यवाद के अग्रणी के शिग यह कार्य (उज्जाजनर मरीगो द्वारा निरपराधों की गिरणतारी) सर्वथा अनधिकार चोप्रा है ? आपरा प्र मम भररर रूप से द्रुटिपूर्ण तो है ही, बनि उमने यह भी प्रकट होता है कि आप मृत्यु से उरने है, जो मर्वथा तक-विहीन बात है। उन नामग्याद के विरय के मण कहा जाय, जिनका एक महत्त्वपूर्ण म्धार उन प्रगण उमानरानी को प्रत्येक भावना को पैरो नले कुचरना जाता है ?”

यह है उस लाजवाब पत्र का एक अंग, जिसे अपने जीवन के अन्तिम दिनों में (अपनी मृत्यु ने दो महीने पूर्व) क्रोपॉटकिन ने लेनिन को लिखा था। लेनिन

उन दिनों सिगाल स्त्री राज्य के निर्गुण शानर के और गोपाटकिन ४१ वर्ष के देश-निवाले के बाद चार वर्ष अरुनी मातृभूमि के इमरोट्टू पातायण्य में वाटकर परलोत-नमन की नैवारी कर रहे थे। उन शब्दों में उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के उम महापुरुष की आत्मा खोप रही है, जिमने कभी अन्ध्याय के माय समझौता करना मुनागिद्य न समझा, जिमने माधन और माय्य दोनों की पवित्रता पर समान रूप में जोर दिया और जिमने ईमानदारी तथा अपग्निरह ता वह दृष्टान उपस्थित कर दिया, जिमकी सिगाल समार के राजनैतिक कार्यकर्ताओं के प्रतिशाम में दुर्लभ हो है।

जब केरेस्वी ने गोपाटकिन से कहा, "आप हमारे मरुतारी मनि-मटल में चाले जिम पद को चुन लीजिए, यही आपसे अपिन हो जायगा", उस समय गोपाटकिन ने उत्तर दिया था— "मंत्रिस्व के कार्य की अपेक्षा तो मैं जूनों पर पाण्डित करनेवाले नमार का काम अति आदरणीय तथा उपयोगी मानता हूँ।" उन्नी प्रफार दम हजार स्वल् की पैशन के प्रमाण को उन्होंने टुकरा दिया और चार के शीतकालीन महलों के निवास की मर्यादा उन्नी की। यह तो हुई लेनिन के पूर्व के शासकों के समय की बात, स्वयं साम्यवादी मरुतार के मिधा-मंत्री लूनाचरस्की ने जब गोपाटकिन को लिखा, "आप मरुतार के दार्ष्ट लाम् स्वल् लेकर अपनी शिनारी के छापने का अधिकार हमें दे दीजिए", तो गोपाटकिन ने उत्तर दिया— "भैंसे तो कभी शासन में पैमा दिया नहीं और न अब ही मरुतारी मनायता प्रणय कर मारता ?" यह उन दिनों की बात है, जब गोपाटकिन को यद्वायय्या के जगुण पर्याप्त भोजन भी नहीं मिलता था, जब उनके पास गेहनों की भी कमी थी और कोई महायत भी नहीं था।

तो फिर आदरणीय तो परमाप्या तक पहुँचा देनेवाले गोपाटकिन अपनी मुजुर-अमर वंसे करने के? देश-निवाले के ४१ वर्ष उन्नीने अपनी लेखनी के चर-चूने पर ही वाट दिए। इमने भी अगजकवादी लेखों ने उन्नीने एक पैमा नहीं बनाया। वह अत्यन्त उन्चकोटि के वैज्ञानिक थे और विज्ञान-सक्ती लेखों तथा टिप्पणियों में उन्हें कुछ मरुदूर्ग मिल जाती

थी। वही सादगी के साथ उन्होंने अपने आत्म-चरित्र में लिखा है—“अगर हम में पर्याप्त समाचार आ जाते अथवा वैज्ञानिक विषयों पर भी नोट स्वीकृत हो जाते, तो रोटी-चाय के साथ मक्खन भी मिल जाता था, नहीं तो सूखी गेटी पर ही गुजर करनी पड़ती थी।”

सुप्रसिद्ध लेखक फ्रैंक हैग्गि ने क्रोपॉटकिन के उगल्लेष्ट के प्रचान के दिनों के आतिथ्य का एक अच्छा चित्र-चित्र गीचा है—“क्रोपॉटकिन की धर्मपत्नी सोफी भोजन तैयार कर रही है, पति के लिए, छोटी-सी पुत्री के लिए और अपने लिए, कि इतने में कोई अतिथि महारथ न जाने क्या से आ टपके। क्रोपॉटकिन ने धीघ्र ही भीतर जाकर कहा—‘सोफी, जग माग में थोड़ा पानी मिला देना।’ थोड़ी देर बाद एक और अतिथि देर पधारे और क्रोपॉटकिन को फिर भीतर जाकर कहना पड़ा—‘बुद्ध पानी और भी।’ इस प्रकार की प्रिया कई बार करनी पड़ी और सोफी को छार्ट आदमियों के बजाय छ-मात आदमियों को भोजन रगना पटना। मेहमानदारी क्रोपॉटकिन के अत्यंत प्रिय गुणों में से थी और कोई दिग्गुरु अजनबी आदमी भी उनके घर पर नकोच अनुभव न करता था।”

सगर में अनेक राजनैतिक महापुरुष हुए हैं और होंगे, पर मन्विष्ण की विद्यालता, हृदय की उदारता, चरित्र की स्वच्छता और जीवन की उच्चता के ख्याल से क्रोपॉटकिन का दृष्टान प्रायः अल्पम ही निह रोगा। वैसे प्रारम्भिक तथा जीवन के वर्षों की दृष्टि से क्रोपॉटकिन के जीवन का सर्वोत्तम वृत्तांत तो उनके आत्म-चरित्र ‘मैमोयर्स ऑव ए गियोन्टमिन्ट’ में ही मिल सकता है, पर वह ग्रथ मन् १८९८ तक का ही है और उनमें दाद क्रोपॉटकिन २३ वर्ष और जीवन रहे थे। इस कारण उनके एक दिग्गुरु जीवन-चरित्र की आवश्यकता थी और उनकी प्रति जाज वृत्तों और आश्रयन अवाफुमोचिक नाम के दो प्रपचारों ने की हैं। (प्रिस पॉटकिन—प्रकाशक बोर्डमैन)।

क्रोपॉटकिन का जन्म मन् १८४२ में हुआ और मन् १९२१ में। उनके जीवन-चरित्र में तत्कालीन हम का एक चरित्र-चित्रता निम्न दिशा में

है। उनका आत्म-चरित्र उतनी सूची के साथ लिखा गया है कि उसे उन्नीसवीं शताब्दी का सर्वोत्तम आत्म-चरित्र कहा जाता है। फोर्पाटसिन का जीवन एकांगी न था, वह बहुअंगीन था। क्रांतिकारी अराजककारी तो वह थे ही, पर साथ-ही-साथ समाज के भूगोलवेत्ताओं में भी वह विशेषज्ञ थे और समाजविज्ञान के भी जाने-माने आचार्य। रूस तथा यूरोप के गहरा रंग के दृष्टिकोण पर भी उनके जीवन में विशेष प्रभाव पड़ा है।

फोर्पाटसिन के इस जीवन-चरित्र को पढ़ने हुए हमें उनके और माधोजी के जीवन तथा दृष्टिकोण में अद्भुत साम्य प्रतीत हुआ। माधो की परित्रा पर वह उतना ही जोर देने थे, जितना कि महात्मा गांधी। मेरी गॉल्ड स्मिथ नामक एक यूद्धवी अराजककारी ने लिखा है—“जो भी नपसुक्त फोर्पाटसिन से मिलने जाना था, उनका कथन वह बड़ी प्रेमपूर्ण मुस्कराहट और मौम्य भावना से सुनते थे; पर एक बात थी, यह वह कि यद्यपि प्रत्येक ईमानदार तथा उत्साही युवक के प्रति उनका व्यवहार उदारनापूर्ण रहना था, तथापि माधो के चुनाव के गिराय में काफी कठोरता से काम लेते थे। प्रचार के कुछ ढंगों को फोर्पाटसिन असह्य मानते थे। अनुचित माधो का विक्रम रंग उन्ना स्वर कठोर हो जाता था और उनको निदा बिना किसी उगा-येगी के होती थी। ‘चाहे जैसे बुरे-भले माधो में अपने व्यष्ट की प्राप्ति’ इस सिद्धांत में उगरे घोर पृष्ठा थी और कोई भी प्रश्न हो—नाते गगहन का, या सपने एतद करने का, या विरोधियों के प्रति व्यवहार का, या दूगरो पादियों के साथ संघ संघातित करने का—अगर कोई माधो की परित्रा को नग्न्य मानता, तो वह उसे नररत की निगाह में देखने थे और उसे निरनीय मानते थे।”

श्री ब्रजानन्दजी का कथन है कि ‘माधो की परित्रा’ पर जोर देकर महात्माजी ने गजनीति को बड़े ऊंचे धरम पर ला दिया। समाज की गजनीति को यह उनकी एक बड़ी देन थी। इस गिराय में फोर्पाटसिन उनके जगदी ही थे।

विद्यया, कृषि, शारीरिक श्रम वा महत्त्व और विदेशीकरण के सिद्धांतों

पर तो दोनों महापुरुषों के विचार बिल्कुल मिलने-जुलने हैं। मन् १८९६ में जब टाइनसाइड के कुछ कार्यकर्ता एक कृषि-सभ कायम करके दोनों दशना चाहते थे, क्रोपॉटकिन ने उन्हें एक पत्र लिखकर प्रोत्साहित किया ता जोर साथ ही मार्ग की बाधाओं के विषय में भी आगाह कर दिया था। उन्होंने बतलाया था कि छोटे समूह में अक्सर झगड़े उठ खड़े होते हैं, शहरी कार्यकर्ताओं के लिए भूमि पर काम करना मुश्किल हो जाता है। पत्नी की कमी का खतरा अलग रहना है और सन्ध्यामीपन की भावना भी गान गाने पर आ जाती है। इसके बाद उन्होंने किया था—“यदि कृषि का राग तुमको आकर्षक लगता है तो उसीको ग्रहण करो। तुम्हें इसमें अपने प्रयत्नों की अपेक्षा सफलता की आशा अधिक है। कम-से-कम तुम्हें गान-संगीत मिलेगी ही और मेरी सद्भावना तो बग़ायर तुम्हारे पास रहेगी।”

क्रोपॉटकिन ने कृषि के विषय में भी अनन्यपान किया था। जब वह शर्मोमी जेल में था, तो सरकार ने उन्हें अपने कृषि-संबंधी प्रयोगों के लिए एक गेज दे दिया था, और रेगा कहा जाता है कि उन्होंने जो प्रयोग करा किए थे उन्होंने कृषि-जगत् में एक शान्ति ही कर दी। जहाँ प्रयोगों के आशय पर उन्होंने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक ‘फोर्ड फॉस्टरीज एंड वकसाफ किया। नई शान्ति के अनेक मूल सिद्धांत इस पुस्तक में मौजूद हैं।

क्रोपॉटकिन के जीवन-चरित्र के लेखकों ने किया है—“दोस्ताना तथा उनके गावियों में आतङ्कात् पर बग़ायर मानेंद रहा।” मन् क्रोपॉटकिन ने भी एक जगह किया है—“संध्यागत वह पहना टाट लंगा कि आतङ्क की प्रतिष्ठा एवं सिद्धांत के रूप में वह रेगा सन्ध्यापूज हैं। इन संध्या में मन् १८९३ की एक महत्त्वपूर्ण घटना बत दी जाती है। आतङ्क की शान्ति में हज़ारों होगई थी। इन्हीं में मजदूर नेता एवं फोर्ड में उठते हुए थे और उन्होंने क्रोपॉटकिन को भी निमंत्रित किया था। इन्हीं संध्या में मजदूरों के कष्टों के निवारण की चर्चा चलती रही सभी लोग एक-दूसरे में सहमत रहे, पर ज्योंही उषासों का दिग्गय किया कि क्रोपॉटकिन को ‘संध्या-प्रियता’ ने मानो मेज पर विनोदक का काम किया। मन् १८९३ के मन् १८९३

नेना मन्मथर के गिराण्ड और तटोर उपाय नाम से लाने के पक्षपाती निराने । उनके चित्तगत प्रोपाट्टिनि रा नहना या ति हमे मगाफत, बीन-नाना तथा प्रचार में ही काम लेना चाहिए । उन बाद-रिसाद का नतीजा यह हुआ कि ममा भग होगई । हमन सैन नामक मन्त्रज्ञ नेना बार-बार चिन्ता से ये—
 “हमें चिन्वन की नीति का आशय लेना चाहिए, नीजो का गोद-पोर दानना चाहिए, जाद्विमो को गत्म तर देना चाहिए ।” लेरिन ज्योरी पुष्ट जाति होयी, प्रिन प्रोपाट्टिनि अपने वैदेशिक उद्देशे में यो विनमता में बगबर यरी कलने मुनाई देने—“नती, विनाज नती, हमे निर्माण करना चाहिए । हमे मनुष्यो के हृदय का निर्माण करना चाहिए ।” ये शब्द तो विन्पुत्र महात्मा गांधी के जैसे ही प्रतीत होने हैं, और उन दिनां—१८९३ में—महात्माजी ने दक्षिण अफ्रीका में बकाया के लिए प्रवेस ही किया था ।

देश का—देश का ही नती, मगार का—यह दुर्भाग है कि हमारे महा मंगार के प्रमिद-प्रमिद रिनारयो के विचारों का मार्गद निराकनेवाले विद्वान बहुत कम हैं, और गान नौर में आज तो, जबकि दुनिया चौगड़े पर गरी हुई है और उमके सामने टौर मार्ग प्रकट करने का प्रयत्न उपरिगत है, वह विषय और भी अधिा महत्त्वपूर्ण बन जाता है । एक मार्ग है प्रोपाट्टिनि तथा गांधीजी का और दूसरा है मामें और स्थायिन का ।

महापुरुषो के जीवन-चरित्त में अद्भुत शक्ति प्रदान करने की सामर्थ्य होती है, और हम दृष्टि में प्रोपाट्टिनि का जीवन-चरित्त गांधी महत्त्व रखता है । क्या अतीव गिनेसा-नेगा दुश्य यह हमारी भागों के सामने का उपरिगत करता है ! एक अन्यन प्राचीन और उन्नावन में जन्म, जगधारी के अन्वा-चारों का जनपोर आकार, मन्मथो की प्रजा का दौर-दौर, भाट वरों की उन्न में जग के पारंद वादर, १२ वर्ष की अवस्था में फेच भागा का अध्यायन और स्त्री-गानैलिन माहिन्य में रचि, अपने बड़े भाई एडवर्डर के साथ तादिर प्रेम, पौरी स्त्रु में शिक्षा, माहवेरिया की यात्रा—मथनंर जनरद के ल से ही बनकर फिर राज में स्थापयत, नरपञ्चान् गेट पीटमंवरण के विद्वविदाउद में पाच वर्ष तक रहित तथा भगोद का अध्ययन, प्राविपारी

दल में सम्मिलित होना, यूरोप की यात्रा और बड़ा अराजकवादी गन्धर्वों का संपर्क, हस लोटकर क्रांतिकारी विचारों का प्रचार आदि । उनके बाद का दृश्य ए. जी. गाडिनर के रेखाचित्र में देखा जा सकता है :

“नाटक का पर्दा बदलता है । जार्ज निकोलस की अंधेरी रात शुरू होगी । लेकिन उसके बाद दाम्पत्य-प्रथा बदलने के कारण थोड़ी देर के लिए जो उपाकाएँ आया था, उसे स्त्रोलिपिन प्रतिश्रिया के अंधकार ने ढक लिया और हम फिर पुलिस के अन्यायों में कुचल जाने लगे । मंत्रालय निरपराध आदमी फामी पर लटका दिये गए और इजाजत ही जेल में डेर दिये गए, अथवा साइबेरिया में अपनी कब्र खोदने के लिए निर्वासित कर दिये गए । मारे हुए पर भय और आतंक का राज्य था, लेकिन भौतिक-ही-भौतिक हम जाग्रत हो रहा था । जार एलेक्जेंडर द्वितीय ने अपने ज्ञानन का कुछ दो जालिम पुलिस अफसरों—ट्रेपोफ और शुवालोफ—को मौत दिया था । वे चाहे जिसे फामी पर लटका देने थे और चाहे जिसे निर्वासित कर देने थे । लेकिन फिर भी वे क्रांतिकारी गुप्त समितियों की कार्यवाहियों को रोकने में सफल नहीं हुए । ये समितियाँ दनादन स्वाधीनता तथा नाति या सामाजिक जनसाधारण में घाट रही थीं । इन घोर अमानिभव वास्तु में भेद की ब्याल ओठे एक अद्भुत व्यक्ति, भूत की तरह, उधर-से-उधर घूम रहा है । उसका नाम बोरोटिन है । पुलिस के अफसर हाथ मार-मारकर रहते हैं—‘वम, अगर हम लोग बोरोटिन को किसी तरह पकड़ ले तो हम क्रांतिकारी सपिणी का मुह ही कुचल जाय—हा, बोरोटिन को और उसके साथी-संगियों को ।’ लेकिन बोरोटिन को पकड़ना आसान काम नहीं । जिन जगहों और मजदूरों के बीच में वह काम करता है, वे उसके साथ दिग्गजागत करने के लिए तैयार नहीं । वे संकटों की संख्या में पकड़े जाते हैं, कुछ को जेल में भेज दिया जाता है और कुछ को फामी का; पर वे बोरोटिन का असली नाम और पता बतलाने के लिए तैयार नहीं होते ।

“नव् १८७४ की वसंत ऋतु । राधा का समय । सेंट पीटर्सबर्ग के सभी वैज्ञानिक और विज्ञान-प्रेमी उपोपस्थित होनेवाली के भवन

मे महान् वैज्ञानिक प्रिम थ्रोस्टेडिन का व्यापकान मुनने ते निम् एतए हूँ । फिनलैंड की यात्रा के परिणामों ते विषय में उनका भावण होता है । रूस के 'डाटल्-विन्द' (जलपान) हाल के विषय में वैज्ञानिकों ने जो सिद्धांत अवनत काममें कर रखे थे, वे एत-ते-बाद दूसरे गणित होते जाने हैं और अग्राह्य नरों के आचार पर एक नवीन सिद्धांत की स्थापना होती है । सारे वैज्ञानिक जगत् में थ्रोस्टेडिन की बात जम जाती है । इस महापुरुष के सम्बन्ध में विषय में कता रहा जाय । उनका ध्यान भिन्न-भिन्न ज्ञानों तथा विज्ञानों के सम्बन्धे सम्प्राप्त पर है । वह महान् गणितज्ञ है, श्रवणज्ञ है (बाह्य वयं की उम्र में उनके उदन्तान दिनों में) । वह मनीषज्ञ है और दार्शनिक । चीम भाषाओं का वह ज्ञान है और मान भाषाओं में वह आगमनों के साथ वातचीत कर सकना है । नीम वयं की उम्र में रूस के गोटी के विद्वानों में— उम महान् देश के तीन-सम्भों में—प्रिम थ्रोस्टेडिन की गणना होने लगी है । प्रिम थ्रोस्टेडिन की बान्तावस्था में फौजी काम सीगना परत था, और पाच वयं बाद जब उनका नामने स्थान ते चुनाव का मयाह जाया तो उन्होंने साठवेंगिया की चुना था । वहा मृथार की ती योजना उन्होंने पेश की और आमून रगिया की यात्रा करके एशिया के भूगोल की भरी भूरी ता प्रिम वरु मनीषज्ञ किया, उमने उनकी कीनि पढ़ने में ही कैल चुनी थी, पर प्राय का भीगोहित जगत में विजय का मेटन उन्होंने मिर साथ दिया गया । प्रिम थ्रोस्टेडिन ज्योधाकिल्ल सोनाहरी ते 'विश्वकल ज्योधाकिल्ल' (भाग ते मभा-पति मनोनीत दिने हूँ । मत्पण ते बाद ज्योती मारी में वैद्यार पर बाहर निगटे, एर दूसरी मारी उनके पास में गुजरी; एर गुजरे में एर मारी में म उतारत रहा—'मिस्टर थ्रोस्टेडिन मयास ।' दोनों मारिया गंत दी गई । उनारे ते पीले मरिषा पुरिम का एर आदमी उम मारी में म कद पदा और बोला—'मिस्टर थ्रोस्टेडिन उरु प्रिम थ्रोस्टेडिन, में जानती निगदर करणा हूँ । उम जानून के उजारे पर पुरिम ते आदमी कूद पडे । उनका विरोध करना व्यर्थ होता, थ्रोस्टेडिन परत लिखे गए । विजयामयानी गुजारा दूसरी मारी में उनके पीले-पीले कर ।"

इसके बाद वह किम तरह किले की जेल में जाकर दिये गए, जहाँ उन्हें क्या-क्या यातनाएँ महनी पड़ी, और वहाँ में वह किम तरह भाग निकले, इसका अत्यंत मनोरंजक वृत्तांत पाठक इस पुस्तक में पढ़ सकते हैं।

सन् १८७६ में लेकर १९१७ तक ४१ वर्ष क्रोपॉटकिन को न्युदेन में बाहर व्यतीत करने पड़े। कठोर-से-कठोर माघना का यह लया युग केवल उनके जीवन का ही नहीं, समार के राजनीतिक इतिहास का भी एक महत्वपूर्ण अध्याय है। उन बीच वह स्विटजरलैंड और फ्रान्स में भी नौ और दो-ढाई वर्ष के लिए उन्हें फ्रांसीसी जेल की भी हवा मानी पड़ी। उनके सभी महत्वपूर्ण ग्रंथ इसी युग में लिखे गए। इनमें कई तो ऐसे हैं, जिनका विश्वव्यापी महत्त्व है, जैसे 'पारस्परिक सहयोग' और 'गेटी का मयाग' आदि। उनके प्रातिकारी लेखों के भी कई संग्रह भिन्न-भिन्न भाषाओं में छपे थे और अनेक रचनाएँ हिंदी में भी छप चुकी हैं।

क्रोपॉटकिन ने लंदन में सन् १८८६ में 'फ्रीडम' नामक पत्र प्रारंभ किया, जो अवतक चल रहा है। इसी वर्ष क्रोपॉटकिन के जीवन की एक अत्यंत दुःखमय घटना पड़ी, उनके बड़े भाई ने माइवेरिया में लीटने हुए रानों में आत्मघात कर लिया। उन्हें भी देहा-निकाले का दंड दिया गया था जिसके कारण बारह वर्ष उन्हें माइवेरिया में बिताने पड़े थे। जब उनके दृष्टिकार के दिन निकट आए, तो उन्होंने अपने बाग-बच्चों को पालने ही इस स्थान पर दिया और फिर एक दिन निराशा में अभिभूत होकर अपने-आपको गोली मार ली। यह महान् गणितज्ञ थे, रसगोपनाज्ञ के अद्भुत ज्ञाता थे, और ज्योतिष-ज्ञान के बड़े-से-बड़े विद्वानों ने उनकी कल्पनाशक्ति प्रशंसा की बहुत प्रशंसा की थी। महाज आशय के आधार पर उन्हें जर्मनी ने देहा-निकाले का दंड दे दिया था, जबकि गतिज्ञानी दण्ड ने उनका धर्म भी नष्ट न था! यदि उन्हें स्वाधीनतापूर्वक अपने रसगोप-मद्यारी अनुसंधान करने की सुविधा होती, तो उन ज्ञान की उत्पत्ति में न जाने का कितने सफल हुए होते। पर निरंकुश शासकों में भगवान् की कल्पना-शक्ति क्या! क्रोपॉटकिन

के हृदय में उनके प्रति अत्यन्त श्रद्धा थी। इन दोनों भाइयों का प्रेम-पूर्ण व्यवहार आदर्श था, पर क्रोएट्ज़िन ने अपनी इन हृदय-बंधन दुष्टता का जिक्र अत्यन्त गद्यम के माग वेज्ड एग वाक्य में किया है—'तुमारी दुष्टिका पर तर्क महीने तक दुन की घटा छार्द नही।' क्रोएट्ज़िन ने अपनी भाभी तथा भतीजे-भतीजियों की सयानामि मेवा की।

क्रोएट्ज़िन की समस्त शिक्षाओं का आधार उनकी मनुष्यता थी। बन्धुन, अराजकवाद इग सिष्य में मार्क्सवाद में गणेशा भिन्न है। मार्क्सवादियों की दृष्टि में व्यक्ति का कोई महत्त्व नहीं। मार्क्सवादी उमारे माग एतरंज के मुहरे की भाति व्यवहार करने हैं और सिद्धान्तवाणी मतभेद होने पर उमारे शरीर तथा आत्मा को अलग-अलग कर देने में भी उमारे कोई गकोन नहीं होना। पर अराजकवादी के लिए मनुष्य मनुष्य मनुष्य है, जिमारे लिए मानो उनका हृदय उमारा पडता है। मार्क्सवादी को अपनी 'प्रणाली' की बिना है, ज्यारि अराजकवादी को 'मनुष्य' की। जब भी कभी अन्याय तथा अन्याचार का प्रश्न आता, क्रोएट्ज़िन बिना किसी भेदभाव के उमारा विरोध करने—चाहे वह अन्याय उनके विरोधी पक्षवाले पर ही क्यों न किया गया हो। उनके शब्द मुन लीजिए—'हम व्यक्ति की पूर्ण स्वाधीनता को मानते हैं। हम उमारे लिए जीवन की प्रवृत्ता तथा उमारी समस्त प्रतिभाओं का स्वतंत्र विकास चाहते हैं। हम उमारे ऊपर लादना कुछ भी नहीं चाहते। हम प्रकार हम उम सिद्धान्त पर पढ़ते हैं, जिम सिद्धान्त की व्योम्ति में धार्मिक नीति-ज्ञान के विरोध में रहते हुए, कहा था—'मनुष्य को बिच्युट स्वतंत्र छोड़ दो। उसे जगहीन मत बनाओ, क्रांति धर्म पडते में ही उमारे आग—इसमें मे स्याश आग—बना नृता है।' उमारे मनोविचारों में भी मा टरो। स्यात्र समाज में ये मतवनाक नहीं होने।'

जिम क्रोएट्ज़िन के श्रयो को पट जाइए, कही भी कोई शत्रु भावना उनमें रिमाई न देगी। कम्युनिस्ट मार्क्सवाद के शाब्दिक जजाड का उनमें नामो-निशान तक नहीं है। कम्युनिस्ट सप्रे-सीमे को इनका महत्त्व देने हैं और नीतिज्ञान को इनका नगम्य मानते हैं जि उनसे मार्क्सवाद की दृष्टि में किसी

भी सहृदय मनुष्य की आत्मा झुलम मयनी है। क्रोपांटकिन का माहित्व इसके विल्कुल विपरीत है। उममें नैतिकता की शीतल मद नमीर नडा ही बहती रहती है।

क्रोपांटकिन के ४१ वर्षीय देश-निकाले के कितने ही दिग्मे उनके जीवन-चरित मे तथा उनके विषय मे लिखे सम्मरणो मे यत्र-तत्र बिगरे पडे है, जिनसे उनकी मत् प्रकृति पर पूरा-पूरा प्रकाश पडता है। एड्वा र्ग प्रेंक हैरिस ने उनमे कहा—“आपने देखा, उन अराजकवादियों ने यीयनारण्या में तो खूब काम किया, पर अब वे अर्थ-शोषण के दिवान होगे है।” इसपर क्रोपांटकिन ने उत्तर दिया—“उन लोगों ने जोसे-जवानी के दिन हमारे अपित कर दिए और अपना सर्वोत्तम हमे भेट कर दिया। अब हमने अधिक की माग उनमे हम कर ही क्या करने है ?” यह उदाहना ही क्रोपांटकिन के सपूर्ण जीवन की कुजी थी।

विलायत मे रहने हुए क्रोपांटकिन की मंत्री बला के मवंश्रेष्ठ विचारको तथा कार्यकर्ताओ मे होगई थी। उनमे मे कितने ही उनके प्रभाव थे। हिटलर, बरनार्ट सा, लैम्बरी, एडवर्ट कार्पेटर, नैविनसन और टेल्ल-फोर्ड प्रभति से उनके सवध बहुत निकट के थे। जब क्रोपांटकिन २० वर्ष के हुए तो उनके अभिनदन के लिए आयोजित एक सभा में बरनार्ट सा ने कहा था—“मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि इनके वर्ष तब हम लोग गलत रास्ते पर चल्ते रहे हैं, और क्रोपांटकिन का रास्ता ही ठीक था। तपस्वियों तथा विचारको की विचारधारा बहुत धीरे-धीरे बान मनी है। क्रोपांटकिन ने अपनी वाणी तथा लेखनी द्वारा जो महान बाप किया, उनमे केवल इंग्लैंड ही नहीं, फ्रांस, इटली, स्विटजरलैंड तथा यूरोप के अन्य देशों के विचारको को भी प्रभावित किया और जो विचार उन दिनों नवीन प्रतीत होते थे, वे आज सार्वजनिक बन गए हैं।

सन् १९१७ की रूसी प्राति के बाद क्रोपांटकिन ने स्वदेश लौटने उचित समझा। तब वह ७५ वर्ष के हो चुके थे, फिर भी इनो मन मे युवको-जैसा उल्हास था। पेट्रोग्रेड मे ६० हजार आदमियों ने उनका स्वागत किया

और सभी मन्तव्य के प्रदान करेगी भी उन्हें मनाया कि उनमें से ।
 नहीं प्रोपॉजिटिव न विद्यमान किसी भी मन्तव्य में नहीं था, इसलिए उन्होंने
 कोई मन्तव्यी पद ग्रहण नहीं किया । जैसे बेरेन्गी के साथ उनके संबंध अन्त-
 थे, पर लेनिन के साथ में शक्ति पढ़ने पर प्रोपॉजिटिव मार्या उपेक्षा के ही
 पात्र बन गये ।

प्रोपॉजिटिव के अन्तिम दिनों की एक शाखी एसा गोन्सर्भन के आत्म-
 चरित्र 'निर्दिष्ट माउन्डफ' में मिलती है । उन्होंने लिखा है— "मैं पढ़ने
 पर मुझे सम्पूर्णितों ने बार-बार विन्यास दिखाया था कि प्रोपॉजिटिव तो बड़े
 आगम की जिम्मा बगल कर रहे हैं और उन्हें न भोजन-वस्त्र की कमी है,
 न विद्या अन्य यन्त्रु थी । पर जब मैं प्रोपॉजिटिव के घर पहुँची तो सामान्य
 इसके विपरीत हो पाया । प्रोपॉजिटिव, उनकी पत्नी गोफी तथा लड़की
 एल्लेकेंडरा, दोनों एक कमरे में रहते थे और वह कमरा भी काफी गरम नहीं
 था तथा पास के कमरे उनके ठंठे थे कि उनका तापमान शून्य से भी नीचे
 था । उन्हें जो भोजन मिलता था वह कम जीवित रहनेभर के लिए पर्याप्त
 था । जिन मन्तव्यी मर्मिन् में उन्हें राशन मिलता था, वह टूट चुकी थी और
 उगरी मन्तव्यी जेठ भेज दिये गए थे । मैंने गोफी से पूछा— 'गुजर-बगर कैसे
 होती है ?' उन्होंने उत्तर दिया— 'हमारे पास एक गाय है और बगीचे में भी
 कुछ पैदा हो जाता है । मासी जेठ बाहर से कुछ भेज देते हैं । अगर पीटर
 (प्रोपॉजिटिव) बीमार न होते और उनके अतिरिक्त पोष्टिक भोजन तो जरूरत
 न होती तो हम लोगों का काम चञ्चू जाता ।"

जैसे कैमबरी टूटी दिनों कम गए हुए थे । उन्होंने एसा गोन्सर्भन से
 कहा था— "मुझे तो यह बात जमानत दीवनी है कि सोवियत सरकार के
 उच्च पदाधिकारी प्रोपॉजिटिव-जैसे मरान् वैज्ञानिक को इस प्रकार भूखों
 मरने देंगे । हम लोग टूट में तो इस प्रकार के जनाचार को अग्रहण
 नहीं करेंगे ।"

प्रोपॉजिटिव उन दिनों अपनी अन्तिम पुस्तक 'नीतिशास्त्र' लिख रहे
 थे । लिखावटों के मरनेदने से लिए, उनके पास पैसा नहीं था । क्लर्क या टाइपिस्ट

रखने की तो वह कल्पना भी नहीं कर सकते थे; इसलिए अपने ग्रंथ की पाण्डुलिपि उन्हें खुद ही तैयार करनी पड़ती थी। भोजन भी उन्हें पुरिटरिन नहीं मिल पाता था, जिनसे उनकी कमजोरी बढ़ती जाती थी और एक चुपके दीपक की रोशनी में उन्हें अपने ग्रंथ की रचना करनी पड़ती थी।

जब श्रोपॉटकिन मरणामत्र हुए तो अव्यय लेनिन ने मागो से नरंश्रेष्ठ टाक्टर और भोजन इत्यादि की सामग्री भेजी थी और वह जानने भी दे दिया था कि श्रोपॉटकिन के स्वास्थ्य के समाचार उनके पास बगल भेजे जाय ! जीवन के अंतिम दिनों में जिसे दमघोटू वातावरण में रहने के लिए मजदूर किया गया, उसकी मृत्यु के समय इनकी चिता का अर्थ ही क्या हो सकता था ? ८ फरवरी, १९२१ को श्रोपॉटकिन का देहान्त हो गया। लेनिन की सरकार ने सरकारी तौर पर उनकी अंत्येष्टि करने का विचार प्रकट किया, जिसे उनकी पत्नी तथा मार्क्सवादीयों ने तुर्गन अन्वेषण कर दिया। अराजकवादीयों के मजदूर-संघ के भवन में उनके शव का उत्सव लगाया, जिनमें २० हजार मजदूर थे। वहीं उत्सव जोगों की भी कि बाजे तब दफा के कारण जम गए। लोग काले छट लिये हुए थे और चिल्ला रहे थे—
“श्रोपॉटकिन के नगी-नायियों को, अराजकवादी बंधुओं, को जेल में छोड़ो !”

सोवियत सरकार ने डिमिट्रिय का टांटा-ना पर श्रोपॉटकिन की विरथा पत्नी को रहने के लिए और उनका मासोपाना नगन श्रोपॉटकिन के मित्रों तथा भक्तों को दे दिया, जहाँ उनके मागल-पत्र चिटिपण तथा अन्य वस्तुएं सुरक्षित रखी। नोपरी १९३० तक जीवित रही और श्रोपॉटकिन के नाम पर स्थापित म्यूजियम की ग्था करती रही। इसके बाद — महाहाय भी टिन्-भित तब दिया गया। इन स्मारकालय का एक प्रतिष्ठित पुजारी सुग-सुगानर तक अमर रहेगा। उनका प्रतिष्ठित तिना-पन के साथ मरान और आदर्शवादिता गौरीगतर सिद्ध हो गन् उपर है।

संस्मरण

क्रोपॉटकिन का जन्म मास्को नगर में सन् १८४२ में हुआ था । उनके दो बड़े भाई थे, निकोलस और एलेकजेडर और एक बड़ी बहन थी, जिमका नाम था हैलीना । जब क्रोपॉटकिन केवल साढ़े तीन वर्ष के थे, उनकी माता का देहात हो गया । माता की मृत्यु का जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा है :

माता की मृत्यु

“मुझे उस समय की कुछ थोड़ी-सी याद है, जब मैं और मेरा भाई उस कमरे में, जहाँ मेरी माता मृत्यु-शय्या पर पड़ी हुई थी, बुलाये गए थे । एक बड़ा-सा शयनागार था । ख़ाट पर सफ़ेद बिस्तरा बिछा हुआ था । मेरी माँ उसपर लेटी हुई थी । बच्चों के लिए छोटी-छोटी कुतिया पड़ी हुई थी । नजदीक ही मेजें बिछी थी । मुदर काच के बतनों में सफ़ाई के साथ मिठाइयाँ और मुरब्बे रखे हुए थे । यह दृश्य कुछ घुघले रूप में अब भी मेरी आँसों के सामने है । मरते समय हमारी माता ने मुझे और मेरे भाई को अन्तिम बार अपनी आँसों के सामने खिलाने के लिए यह मिठाई रखवाई थी । माता को तपेदिक़ हो गई थी । उनकी उमर कुछ ३५ वर्ष की थी । उनकी इच्छा थी कि हमें उनके लिए हमने विदा होने के पहले वह हमें एक बार पुचकार ले और हमें प्रमत्त देखकर स्वयं प्रमत्त हो ले । मुझे उमंगें पीले और पतले चेहरे की याद है । उसके नेत्र बड़े-बड़े और गहरे भूरे रंग के थे । बड़े प्रेम के साथ उनसे हमारी ओंग देखा, हमसे गाने के लिए कहा और फिर बोली—‘आओ बेटा, मेरी ख़ाट पर बैठ जाओ ।’ उनके बाद

उमकी आगों में आगू भर आग। उमे गानी आगई, और तूम गोंगों की ब्रह्मा में चले जाने के लिए कहा गया।

“फिर हम लोग उन बड़े मकान में गए। उंदे कमरे में ले जाये गए। हमारी जर्मन धाय मैडम बर्मन और रजियन भाग उदियाला ने हमसे कहा—
‘बच्चों, तुम अब नौ जाओ।’ उनकी आगों में आगू भरने हुए थे, और वे हमारे लिए काली कमीजें नौ रहीं थीं। हमें नींद नहीं आई, सिनी अनाथ बीज ने हम उरे हुए थे और अपनी मा के बारे में उन दोनों भायों की गानागी जो मुन रहें थे, पर हमारी समझ में कुछ नहीं आता था। अपनी गेट पर से हम कूद पडे और कहने लगे, ‘अम्मा क्या है?’ ‘अम्मा क्या है?’ दोनों भायों रोने लगी, और हमारे घुघराये बायों पर घपती देकर जाने लगी—
‘बेचारे अनाथ होंगा।’ फिर रजियन धाय बोली—‘तुम्हारी अम्मा क्या आकाश में चली गई, ब्रह्मा देव-दूतों के पास।’

‘अम्मा आकाश में कैसे चली गई? क्यों चली गई?’

“हमारे बाल्यावस्था के कल्पनाशील दिमाग के इन प्रश्नों का कुछ भी उत्तर न मिला।”

प्रिंस प्रोपांटकिन की माता बड़े प्रेमपूर्ण स्वभाव की थी। नीरोगी और मुलामों पर उनकी बड़ी कपादृष्टि रहती थी और वे लोग भी उन बड़े प्रेम और श्रद्धा की दृष्टि में देखते थे। उनके मरने के बाद वे राजा लोग अंतर्द्वार से कहा करते थे—“बड़े होने पर क्या तुम भी अपनी माता की तरह स्वयं कृपालु होंगे? उनकी हम दासों पर बनी रता थी।” प्रोपांटकिन ने अपने मा-कर दीन-हीन मनुष्यों के लिए जिन अनाधारण भाग का परिचय दिया उनके मूल में उनकी माता का प्रेममय स्मभाव ही था।

पिताजी

प्रिंस प्रोपांटकिन ने अपने पिताजी का नाम गरीब जिय गीला है। यह पुराने टग के सैनिकता-प्रिय आरमों थे। अपने ऊन रस का उरो बाल काफी अभिमान था। सैनिक स्व-स्व उरो बाल जिय थे। का उत्तर—

भी थे, पर युद्ध-क्षेत्र में घायद ही कभी गए हो ! नारा म्नी शासन उन दिनों इसी तरह के आडंबरयुक्त सैनिकों से भरा हुआ था। यदि सैनिकों का कोई गुलाम—गुलामी की प्रथा उन दिनों इस में काफी प्रचलित थी—बहादुरी का काम करता था तो उसका पुरस्कार उसके स्वामी को मिलता था ! क्रोपॉटकिन लिखते हैं—

“हमारे पिताजी ने मन् १८२८ के रूस-टर्की युद्ध में भाग लिया था, लेकिन जोड़-तोड़ लगाकर आप बराबर चीफ कमांडर के आफिस में ही बने रहे। जब हम लोग कभी उन्हें बहुत खुश देखते तो मौका पाकर उनसे प्रार्थना करते कि आप हमें युद्ध का कुछ हाल सुनाओ, पर वह केवल एक बात बतलाया करते थे कि किन तरह रात के बख्त एक बार सैकड़ों तुर्की कुत्तों ने उनपर तथा उनके स्वामिभक्त नीकर फ़ोल पर आक्रमण किया था। तलवार चलाकर ही वह इन भूखे जानवरों से बच सके। यदि वे तुर्क लोगों के आक्रमण की बात कहते तो हम बच्चों के मन को कुछ मनोप भी होता। जब हम जिद करके पूछते कि आपको वीरता के लिए ‘मैण्ट एनी’ का पदक कैसे मिला तो वह इनका जो उत्तर देते थे, उसमें सचमुच बड़ी निराशा होती थी। बात यह हुई थी कि जिस ग्राम में मैनापति और उनके साथी ठहरे हुए थे, उसमें आग लग गई। किसी घर में एक बच्चा पड़ा रह गया और उसकी मा बच्ची करुणोत्पादक टग से रो रही थी। फ़ोल आग की लपटों में से घुसकर उस बच्चे को निकाल लाया। चीफ कमांडर ने इन दृश्य को अपनी आंखों से देखा और तुरन्त पिताजी को वीरता का पदक प्रदान किया !

“हम लोग पूछने—‘पिताजी, बच्चे को तो फ़ोल ने बचाया था !’
पिताजी बड़ी दृढ़ता से जवाब देने—‘नो इनमें क्या ! फ़ोल नीकर किगका था ? यह सब एक ही बात है।’”

ज़ार के पार्षद

जब प्रिन्स क्रोपॉटकिन की उमर आठ वर्ष की थी, उनके जीवन में एक उल्लेखनीय घटना हुई। जार की राजमारोहण की रजन-जयंती थी और

उसके लिए मास्को में बड़ी धूम-धाम के साथ उत्सव मनाया गया था। जार तथा उनके कुटुंबी मास्को पधारनेवाले थे। उसीदिने उपलक्ष्य में एक बाल-नाच हुआ था। क्रोपाँटकिन अपनी माता के साथ उसमें गए थे। उन्हें फारिस के राजकुमारों के-से वस्त्र पहना दिये गए थे। जार को बालक क्रोपाँटकिन का भोला-भाला चेहरा बड़ा पसंद आया और उसने अपने नौकरों को आज्ञा दी कि उस बच्चे को मेरे पास ले आओ। जार के नौकर क्रोपाँटकिन को लाने के लिए दौड़े। क्रोपाँटकिन वहाँ ले जाये गए। जार को भेदे मजाक करने का बड़ा शौक था। वह क्रोपाँटकिन का हाथ पकड़कर अपनी पुत्र-बधू मेरी एलेक्जेंड्रोवना के पास, जो उन दिनों गर्भवती थी, ले गए और बोले—“भुझे ऐसा बच्चा जन कर देना।” वह बेचारी डम मजाक से लज्जित हो गई। जार के भाई माइकेल ने बालक क्रोपाँटकिन को रला दिया। उसने क्रोपाँटकिन के मुह पर ऊपर से नीचे हाथ फेरते हुए कहा—“देखो बच्चे, जब तुम अच्छे बालक होते हो, तब सब तुम्हारे साथ ऐसा बर्ताव करने हैं।” और फिर नीचे से ऊपर की ओर हाथ फेरते हुए क्रोपाँटकिन की नाक को रगड़ते हुए कहा—“जब तुम बुरे लडके होते हो, तब सब तुम्हारे साथ यो बर्ताव करते हैं।” बहुत कोशिश करने पर भी बालक क्रोपाँटकिन अपने आसू न रोक सका। जो महिलाएं वहाँ उपस्थित थी उन्होंने क्रोपाँटकिन की तरफ ली, उसे पुचकारने लगी, और जार की पुत्र-बधू मेरी एलेक्जेंड्रोवना ने उसे अपनी गोदी में ले लिया। क्रोपाँटकिन उसकी गोद में ही नो गए। बाल-नाच में वह शामिल न हुई और वह बालक को गोद में लिए बैठी रही।

इसके बाद जार ने प्रसन्न होकर क्रोपाँटकिन को अपना पारंपद बना दिया। जार का पारंपद होना उन दिनों अत्यंत गौरव की बात ममती जाती थी और यह गौरव विरले ही आदमियों को प्राप्त होता था।

दासों की दुर्दशा

क्रोपाँटकिन ने अपने जीवन-चरित में रम के दानों की दुर्दशा का अत्यंत हृदय-द्रावक चित्र खींचा है। उनके साथ जानवरों में भी बुरा बर्ताव किया

जाता था। छोटे-छोटे अपराधों के लिए उनपर कोड़े लगवाए जाने थे। उनके गादी-ब्याह, विना उनकी अनुमति के, चाहे जिनके माथ कर दिये जाते थे। बेचारे रोते थे, मना करते थे, विनती करते थे, गिडगिडाते थे, पर सब व्यर्थ। जमींदार लोग यह समझते ही नहीं थे कि उन बेचारों के भी आत्मा है। क्रोपॉटकिन लिखते हैं—

“किमीको इस बात की आशंका भी न होती थी कि बेचारे दामो के हृदय में भी मानुषिक भाव है। जब तुर्गोनेव ने अपनी गल्प ‘मूमू’ प्रकाशित की, और ग्लिगोरोविच ने अपने उपन्यासों में दासों की दुर्दशा का वर्णन करके रूसी पाठकों को तलाया था, उस समय कितने ही रूसी लोग आश्चर्य में पड़ते थे कि क्या सचमुच इन दामों के हृदय में भी हमारे तरह के भाव पाये जाते हैं? बड़े-बड़े घराने की जो रूसी स्त्रियाँ अपनी भावुकता के कारण फ्रासीसी भाषा के उपन्यासों के नायक-नायिकाओं के वृत्तान्तों को पढ़कर आमू वहाएँ विना न रहती थी, कहती थी—‘अरे, क्या यह रशियन दाम हमारी-तुम्हारी तरह ही प्रेम करते हैं? क्या यह बात संभव है?’...”

मिलिटरी स्कूल में

क्रोपॉटकिन ने अपने स्कूली जीवन का जो विवरण लिखा है, वह भी बड़ा चित्ताकर्षक है। गीबेन्नादे शिक्षकों को विद्यार्थी किम तरह तग किया करते हैं, इसका बड़ा मनोरंजक वृत्तान्त है। वह लिखते हैं—“एक जर्मन यहूदी मि. एवर्ट थे, वह विद्यार्थियों को लिखना सिखाया करते थे। लड़के उन्हें जتنا अधिक तग किया करते थे कि अगर उनकी निर्धनता उन्हें वहाँ रहने के लिए बाध्य न करती तो वह कभी के स्कूल छोड़कर चले गए होते। बड़े दर्जों के लड़के उन्हें गान तीर पर तग करते थे, पर उन्होंने एक नमजीना कर लिया था—‘एक दिन में सिर्फ एक ही मजाक होना चाहिए, उसमें ज्यादा नहीं।’ ममजीते की इन वार्त का प्रायः लड़कों की ओर से उल्लंघन किया जाता था। एक दिन पिछले बेच पर बैठनेवाले एक लड़के ने गिटिया और न्याही में भिगोरर एक स्पंज इन शिक्षक महोदय को निताना बनाकर मारा।

वह उनके कंधे पर लगा और स्याही के छोटे छिटकाकर उनके मुंह और नफेद कमीज पर फैल गए। हम लोगों को यह उम्मीद थी कि एवर्ट महोदय अपने क्लास को छोड़कर तुरन्त ही डर्म्यक्टर में इस बात की शिकायत करेंगे, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। अपना हमाल जेब में निकालकर उन्होंने अपना चेहरा पोछा और कहा—‘भर्त, एक मजाक हर रोज का नियम है, नां हो चुका, इसमें ज्यादा न होना चाहिए।’

‘फिर दबी जवान में यह कहते हुए कि हमारी कमीज खराब होगई, वह किसी लडके की नोटबुक गुद्व करते रहे। हम सबका बहुत धर्मिदा होना पडा। उनकी सहनशीलता में लडकों के विचार उनके पक्ष में हो गए। हम लोगों ने उस भायी को फटकारते हुए कहा—‘भर्त ! यह तुमने क्या किया ?’ किमी लडके ने कहा—‘तुम्हें गर्म धानी चाहिए, वह बेचारे गरीब आदमी है और तुमने उनकी कमीज खराब कर दी।’ अपराधी उटका शिक्षक के पाम माफी मागने गया। एवर्ट ने खेदयुक्त स्वर में केवल इतना कहा—‘भर्त, सबको सीखना चाहिए, सीखना।’ बलाम में सर्वत्र शांति छा गई। दूसरे सबक के दिन हम सबने बहुत ही बटिया ढग में लिखा और एवर्ट साहब के पाम अपनी नोटबुक ले गये। यह देखकर उनका चेहरा चिन्न गया और दिनभर बटे खुश रहे। उनकी यह सहनशीलता मेरे हृदय पर अकिन होगई और मैं उसे आजतक नहीं भुला सका। उन्होंने जो सबक मुझे निगाया, उसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ।’

हस्तलिखित क्रांतिकारी पत्र का संपादन

मन् १८५९ या १८६० में प्रोपॉटकिन ने स्कूठ में ही एक हस्तलिखित क्रांतिकारी पत्र निकालना शुरू कर दिया था। प्रथम अंक को आपने तीन प्रतिगा को और अपने मे ऊंचे दर्जे के विद्यार्थियों को डेस्क में रख दी और साथ ही यह भी लिख दिया कि इस पत्र के विषय में अपनी सम्मति एक काजपर लिखकर हमारे स्कूल की घड़ी के पीछे रख आना। दो उडकों ने उन्हे पत्र, और अपनी सम्मति लिखकर रख आए। दूसरे दिन प्रोपॉटकिन दती उन्हा जे

साथ बहा गए, तो उन सम्मतियों को रखा पाया। उसमें लिखा था—
 “हम लोग आपकी बातों से पूर्णतया सहमत हैं. पर आप ज्यादा खतरे में न
 पड़ें।” बहुत उत्साहित होकर आपने अपने पत्र का द्वितीय अंक निकाला और
 फिर उसी तरह उन विद्यार्थियों की डेस्क में उनकी प्रतियां रख दी। इस
 अंक में बड़े जोरो के साथ स्वाधीनता का पक्ष-समर्थन किया गया था और
 इस बात की प्रेरणा की गई थी कि सबको मिलकर देश को स्वाधीन करने का
 प्रयत्न करना चाहिए। इस बार उन विद्यार्थियों ने अपनी सम्मति लिखकर
 घड़ी के पीछे नहीं रखी, बल्कि वे खुद ही क्रोपॉटकिन के पास आए और बोले—
 “हमें यह दृढ़ विश्वास है कि तुम्हीं इस पत्र का संपादन करते हो। हम लोग
 आपसे इस विषय में बातचीत करना चाहते हैं। हम आपसे बिल्कुल सहमत
 हैं और हम आपसे यह कहने आए हैं कि हम और आप मित्र हैं। अब आपको
 अपने पत्र के निकालने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि स्कूलभर में हम लोगों
 के विचारों के केवल दो लड़के और हैं। यदि भेद खुल गया तो हम सबकी
 आफत आ जायगी। हम लोगों को चाहिए कि एक गुट बना ले और यथावकाश
 इन विषयों पर बातचीत किया करें।” क्रोपॉटकिन ने उन दोनों विद्यार्थियों
 से हाथ मिलाया और एक मित्र-मउली स्थापित होगई। ये तीनों मित्र आपस
 में प्रायः देश की स्थिति पर बातचीत किया करते थे।

क्रोपॉटकिन के दिमाग पर नत्कालीन रुसी साहित्य-भेदियों की रचनाओं
 का बड़ा प्रभाव पड़ा था। उन दिनों तुर्गनेव, टॉल्स्टाय, हर्जिन, वाकूनिन,
 डोस्टोवस्की इत्यादि के ग्रंथ प्रकाशित हो रहे थे, और वास्तव में मन् १८५७
 और १८६१ के बीच का समय रुसी साहित्य की दृष्टि में महत्वपूर्ण कहा जा
 सकता है। रुस में उन दिनों राजनैतिक विषयों पर तो कोई पुस्तक मुद्रण-
 मुल्ला नहीं जा सकती थी, इसलिए लोग लुप्त-छिपकर उपन्यासों
 और प्रहसनो के रूप में राजनैतिक विचारों का प्रचार किया करते थे।
 ऊपर ने तो यह साहित्य बिल्कुल मामूली-सा जचता था, पर था वह वास्तव
 में शानिकारी और उसकी लहरे उन एजान न्यानों तक भी, जहां उनके
 जाने की कुछ भी गुंजाउश नहीं थी, पहुंच जाती थी। वहा क्रोपॉटकिन का

घोर राजभक्त मिण्टिरी कालेज आंग्र कहा इस प्रकार का माहिन्य ! पर क्रांतिकारी विचारों की लहरों को कोई दीवार नहीं रोक सकती और वह सभी विध्वन-बाधाओं को पार करती हुई स्वाधीनता-प्रिय पुष्पों के हृदय तक पहुँच ही जाती है, क्योंकि वे हृदय में निक्ली हुई होंगी हैं ।

नियुक्ति

जब क्रोपॉटकिन अपनी शिखा समाप्त कर चुके, तो उनकी नियुक्ति का समय आया । इन लोगों को, जो फौज में जाकर अफसर बनते थे, यह ज्ञापित था कि वे अपनी-अपनी इच्छानुसार अपनी रेजीमेन्ट चुन लेते थे । कोई तोपखाने में जाता था तो कोई कज्जाक सेना में सम्मिलित होता था । क्रोपॉटकिन की इच्छा मैनिंक बनने की विलकुल नहीं थी । वह कालेज में अध्ययन करना चाहते थे, पर उनके पिता इसके सर्वथा विरुद्ध थे, इसलिए वह राजाकार थे । क्रोपॉटकिन के अन्य साथियों ने भिन्न-भिन्न रेजीमेन्टों में अफसर बनने का विचार किया, पर क्रोपॉटकिन ने माइवेरिया की कज्जाक-सेना में अफसर बनने का निश्चय किया । इस बात को सुनकर क्रोपॉटकिन के माता दंग रह गए । कोई-कोई कहने लगे—“माइवेरिया ! अरे भाई, मजाक तो नहीं कर रहे ! मचमुच तुम बड़े दिलचर्मीवाज हो ! भला उस मनहम मुल्क में जाकर क्या करोगे ?” पर क्रोपॉटकिन ने मजाक नहीं किया था । उन्होंने भूगोल का अत्यन्त परिश्रम के साथ अध्ययन किया था, और उनकी इच्छा थी कि माइवेरिया पहुँचकर आमूर नदी के विषय में कुछ वैज्ञानिक अनुसंधान करें । इसके साथ ही उन्हें इस बात की भाशा थी कि माइवेरिया पहुँचकर वह उन राजनैतिक सुधारों को, जो अभी ही होनेवाले थे, कार्य रूप में परिणत करने का अवसर प्राप्त करेंगे । माइवेरिया जाना कोई पसन्द नहीं करता था, और इसलिए क्रोपॉटकिन ने सोचा कि वहाँ इच्छानुसार कार्य करने के लिए निम्न क्षेत्र मिलेगा ।

जार से बातचीत

तमाम युवक अफसर अपने-अपने स्थानों को जाने से पहले जार में मिलने

के लिए गए। क्रोपॉटकिन को भी जाना पड़ा। आम्स के कज्जाको की रेजीमेट उमर में बहुत छोटी होने के कारण क्रोपॉटकिन को अफमरो की पक्ति में सबसे नीचे खड़ा होना पड़ा। जार ने क्रोपॉटकिन को देखा और कहा—“आखिर तुमने साइबेरिया जाना तय कर ही लिया ! क्या तुम्हारे पिताजी राजी हो गए ?” क्रोपॉटकिन ने कहा—“जी हाँ, उन्होंने अनुमति दे दी।” फिर जार ने पूछा—“क्या तुमको इतनी दूर जाने में डर नहीं लगता ?” क्रोपॉटकिन ने बड़े उल्लाहपूर्वक उत्तर दिया—“नहीं, मैं तो काम करना चाहता हूँ। नए मुबारो के बाद साइबेरिया में बहुत-कुछ काम करने को मिलेगा।” जार ने नीचे क्रोपॉटकिन की ओर देखा, कुछ चिंता की झलक उसके चेहरे पर प्रकट हुई, और फिर वह बोला—“अच्छा, जाओ, आदमी हर जगह उपयोगी मिद्ध हो सकता है।” इसके बाद जार के चेहरे पर बड़ी थकावट के-से चिह्न प्रतीत हुए। क्रोपॉटकिन लिखते हैं—“मैं उन्नी नमय ममज्ञ गया कि यह आदमी तो बीत चुका, इनसे मुबार इत्यादि कुछ नहीं होने के। यह तो फिर अत्याचारपूर्ण नीति का प्रयोग किए बिना न रहेगा।” हुआ भी ऐसा ही, जेलखाने देशभवतो से भरे जाने लगे और चारों ओर जारशाही का आतंक छा गया।

साइबेरिया में

साइबेरिया में क्रोपॉटकिन को पाँच वर्ष तक रहना पड़ा। यहाँ उन्हें अनेक अनुभव हुए। क्रोपॉटकिन को अभी यह विश्वास था कि जार की सरकार मुबारो के लिए मचमच उतमुक है और उन्होंने अत्यन्त परिश्रम के साथ साइबेरिया में देश-निकाले की प्रथा के मुघार और म्युनिमिपल मुघार के लिए अपनी योजनाएँ तैयार की, परन्तु ये योजनाएँ वागजो में लिखी हुई जहा-की-तहा पड़ी रही और उनका कोई उपयोग नहीं हुआ ! जारशाही के शासन का एक दृष्टान्त मुन लीजिए। साइबेरिया के किसी जिले में एक अत्यन्त धूर्त अफमर था। वह गिमानो को खूब लटा करता था और उटकर गिबन लिया करता था। वह उनको कोटे भी लगवाया करता था, यद्यत्कि कि स्त्रिया भी उगते अत्याचार में नहीं बनी थीं। उनके भी कोटे उगते थे। इस अफमर की

धूर्तताओं की खबर प्रात के गवर्नर के कानों तक पहुंच चुकी थी, पर वे कुछ भी नहीं कर सकते थे, क्योंकि सेंटपीटर्सबर्ग में इस अफसर के मित्रों जयवा सवधियों का जोर था, और इसलिए वह निर्दिष्ट होकर मन-मानी किया करता था। प्रात के गवर्नर जब उसकी शिकायतें सुनते-सुनते तंग आया, तो उन्होंने क्रोपॉटकिन को इस बान के लिए नियुक्त किया कि वह इस अफसर की कार्रवाइयों की जांच करे। यह काम आसान नहीं था, क्योंकि कोई भी किमान उस दुष्ट अफसर के खिलाफ गवाही देने को तैयार नहीं था। हमी भाषा में एक कहावत है—'परमात्मा तो बहुत दूर रहता है, पर तुम्हारा अफसर तुम्हारे निकट का पड़ोसी है', इसी डर में वे लोग अपने जिले के अफसर के विरुद्ध साक्षी नहीं दे सकते थे, यहातक कि वह अंगन भी जिनके कोटे लगवाये गये थे, अपना लिखित बयान देने को तैयार नहीं थी। जब पंद्रह दिन रहकर क्रोपॉटकिन वहा के निवासियों के विस्वामपात्र बन गए, तब कही उन्होंने अपनी दुख-गाथा सुनाई। इस अफसर के विरुद्ध उनसे प्रबल प्रमाण मिले कि वह आगिरकार वर्खास्त कर दिया गया, पर कुछ महीने बाद क्या हुआ कि वही अफसर किमी दूसरे प्रात में उच्चतर पद पर भेज दिया गया। वहा भी उसने लूट-मार जारी रखी। दो-चार वर्ष बाद ही वह धनवान होकर सेंटपीटर्सबर्ग को लौट गया और वह फिर नमाचार-पत्रों में देश-भक्ति पूर्ण लेख लिखने लगा।

फिर विद्यार्थी-जीवन

सैनिक जीवन क्रोपॉटकिन के स्वभाव के बिल्कुल प्रतिकूल था और सन् १८६७ में वह अपनी नौकरी में त्यागपत्र देकर सेंटपीटर्सबर्ग आया। जो पाच वर्ष उन्हें माइवेरिया में बिताने पड़े, उनमें उन्हें बहुत-बहुत अनुभव होगया। उन्हें जारशाही की सुधार-प्रवृत्ति का खोब-अपन अच्छी तरह महसूस होगया, और देश-भक्तों के कष्टमय जीवन में भी वह भंगी-भानि परिचित हो गए। वहा रहते हुए उन्हें आमूर नदी के विषय में अनुमान भी गन्ना पडा, इसलिए उन्हें अपने देश के उन भाग का भौगोलिक ज्ञान भी होगया। अब

विश्वविद्यालय में आकर क्रोपॉटकिन ने अपना सारा समय भूगोल के लिए लगाना प्रारंभ कर दिया। उत्तरी एशिया के जो मानचित्र उन दिनों छापे जाते थे, उनमें पहाड़ इत्यादि के निगान यू ही अदाज से और गलत लगा दिये गए थे। क्रोपॉटकिन ने कई वर्ष तक परिश्रम करके इनका ठीक-ठीक पना लगाया। बड़े-बड़े भौगोलिक और वैज्ञानिक जिस समस्या को हल नहीं कर पाए थे, उसे क्रोपॉटकिन ने हल कर दिया। विज्ञान-संसार में उनकी कीर्ति फैल गई। वैज्ञानिक अनुसंधान करने के बाद वैज्ञानिक को जो आनंद होता है, उसका वर्णन करते हुए क्रोपॉटकिन ने लिखा है :

“जिस किमीने अपने जीवन में एक बार भी उस आनन्द का अनुभव किया है, जो वैज्ञानिक कृति के सफल होने के बाद आता है, वह उस आनन्द को कदापि भूल नहीं सकता, और वह बार-बार इसी बात की इच्छा करेगा कि वह आनन्द मुझे जीवन में अनेक बार मिले। पर एक बात से उसे दुःख होगा, वह यह कि इस तरह का आनन्द किन्ने अल्प-संख्यक आदमियों के भाग्य में वदा है। यदि माधारण जनता को अवकाश मिलता और विज्ञान की बातें उन्हें समझा दी जाती तो थोड़े-बहुत अंग में वे भी इस आनन्द का कुछ अनुभव कर लेते, पर दुर्भाग्यवश यह ज्ञान और अवकाश केवल मुट्ठी-भर आदमियों तक ही परिमित रहता है।”

जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन

अब क्रोपॉटकिन के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन का समय आता है। भौगोलिक अनुसंधान करने के लिए वह फिनलैंड भेजे गए थे। वहां जाकर उन्होंने उस देश के दीन-हीन रिमानों की हालत देखी। उसमें उनका हृदय द्रविण हो गया और वह सोचने लगे—“ये बेचारे मेहनत करते-करते मरे जाते हैं, फिर भी उन्हें पेट-भर भोजन नहीं मिलता। अपने वैज्ञानिक अनुसंधान करने में उन्हें यह बतनाऊ भी कि तुम अमुक जमीन में अमुक प्रकार का ग्याद दो और फला काय के लिए फला अमरीकन मशीन मंगाओ, तो उनमें क्या फायदा होगा ? मरतारी टैक्स वगैर बढता जाना है, और टैक्स देने के बाद

पेट-पूर्ति के लिए भी काफी अन्न नहीं वचना। शरीर टूटने के लिए, रुपये भी उसके पास नहीं। भला वह मेरे वैज्ञानिक अनुसंधानों को और नज़ाहों को लेकर क्या चाटेगा? इस किमान को मेरी वैज्ञानिक नज़ाह की ज़रूरत नहीं, उसे ज़रूरत है मेरी, यानी मैं उसके पास रहूँ और अपनी ज़मीन का मानसिक बनने में उसकी मदद करूँ। जब उसको भरपेट खाना मिलेगा, तब वह मेरी किताब भी पढ़ लेगा और उसमें कुछ लाभ भी उठा लेगा, अभी नहीं। विज्ञान बड़ी अच्छी चीज़ है। मैंने वैज्ञानिक अनुसंधानों के आनंद का अनुभव किया है और उसका मूल्य मैं भली-भाँति जानता हूँ, पर मुझे क्या अधिकार है कि मैं अकेले ही उन सर्वोच्च आनंदों का मज़ा लूँ, जब मेरे चारों ओर एक-एक रोटी के टुकड़े के लिए भयंकर जीवन-संग्राम चल रहा है? जो लोग गेहूँ उगाकर भी इतना नहीं बचा सकते कि ग़ुद उनके बच्चे गेहूँ की रोटी खा सके, तो मुझे क्या अधिकार है कि मैं उनके मुँह की रोटी के टुकड़े छीनकर स्वयं उच्च भावनाओं के समार में विचरण करूँ? मनुष्य-जाति जो ग़ुद उत्पन्न करती है, उसकी मिकदार अभी बहुत थोड़ी है, इसलिए यदि मैं मजे में रहता हुआ वैज्ञानिक अनुसंधानों में मस्त रहूँ, तो इमया एवं भी तो विनी गरीब के मुँह की रोटी छीनकर ही आवेगा। ज्ञान बड़ी भारी चीज़ है, मैं भी यह मानता हूँ। इससे इन्कार कौन करता है? मनुष्य को ज्ञान बढ़ाना चाहिए। बहुत ठीक। पर मवाल तो यह है कि जितना ज्ञान प्राप्त होगा है, जितने वैज्ञानिक अनुसंधान हो चुके हैं, क्या वे सर्वसाधारण तक पहुंच गए? क्या आम लोग उन्हें जान गए? मेरी समझ में जितने ज्ञान का पता लग गया है, वह बहुत काफी है। यदि यह ज्ञान सर्वसाधारण की गति तक जाय, तो फिर विज्ञान की कितनी जबरदस्त उत्पत्ति हो? तब उत्पत्ति, आदिमान और मानाजित कार्यों की गति, इतनी तीव्र हो जायगी कि अभी हम उग्रा अज्ञान भी नहीं रूना सकते। साधारण जनता ज्ञान प्राप्त करना चाँही है। उसकी हार्दिक इच्छा है कि उसे ज्ञान मिले। उसे ज्ञान प्राप्त करने की सामर्थ्य भी है, पर उसे ज्ञान देना कौन है? उनके पास ज्ञान क्या है? है?"

क्रोपॉटकिन लिखते हैं—“मेरे विचार उनी दिशा में काम करने लगे । मैंने कहा, वन, मैं तो अब इसी तरह के दौल-हीन आदमियों के लिए काम करूंगा । जो आदमी वैज्ञानिक अनुसंधान करने और माधारण जनता का ज्ञान बढ़ाने तथा उसकी उन्नति करने का दम भरते हैं, वे खुद कभी माधारण जनता के पास भी नहीं फटकने ! कैसी विडवना है ! उनके विचार और उनका वास्तविक जीवन, बितने परस्पर-विरोधी हैं ! जब मेरे मन में उन प्रकार के विचार चक्कर खा रहे थे, तभी रूसी भौगोलिक सोनायटी का तार आया, “क्या आप कृपा कर हमारी सोनायटी के नेक्टेरी का पद स्वीकार करेंगे ?” मैंने जवाब दिया—“नहीं ।”

रूस की तात्कालीन दशा

प्रिंस क्रोपॉटकिन ने रूस की उस समय की हालत का जो चित्र रखा है, वह भारत की पराधीनता के दिनों की स्थिति से बिल्कुल मिला-जुला है । नवयुवकों को ऐसी शिक्षा दी जाती थी जिससे उनमें विचार-शक्ति उत्पन्न ही न हो । जिन लड़कों में स्वतंत्र विचार-शक्ति की थोड़ी-सी मात्रा पाई जाती थी, वे निकाल बाहर किए जाने थे । लड़कों को औद्योगिक शिक्षा की जरूरत थी और विद्यालयों में लैटिन तथा ग्रीक भाषाएँ पढ़ाई जानी थी ! शिक्षा का विस्तार करने और उसे उपयोगी बनाने के बजाय उसे परिस्थिति के बिल्कुल विपरीत बनाकर निरर्थक कर दिया गया था । नवयुवकों के हृदय में निराशा घर कर रही थी । किमान भारी टैक्सों के बोझ में पिये जाते थे । मुगलिशिन समाज की दशा बड़ी विचित्र थी । उनके जीवन में भोग-विलास ने घर कर लिया था और राजनैतिक मामलों के विषय में बातचीत करने दृष्टि भी वे उरते थे ! साहित्यिक सभाओं के आदमी और भी दबू वन गए थे । जब कभी प्रिंस क्रोपॉटकिन या उनके बड़े भाई राजनैतिक चर्चा छेड़ते, तो उन मंत्रियों के मदन्य उनकी बात बीच में ही नाटार नाटार और रगमन की वानें करने लगते ।

अपने और अपने-से अनुभवी समझने आदमी नवयुवकों को उपदेश

देते थे—“हाथ-पाव बचाए और मृजी को टरकाए” की नीति में काम लो। पत्थर की दीवार में मिर मारने में क्या फायदा है ? धीन्ज धरो, यह वस्तु भी निकल जायगा, इत्यादि।” पुलिम के अत्याचार बराबर बढ़ रहे थे। उन्नत विचारों के नवयुवकों को यही स्वतन्त्र रहना था कि वह सब पकड़ लिया जाय। किमी राजनैतिक अपराधी में महानुभूति प्रकट करना भी एक भयकर अपराध समझा जाता था। अगर किसीके यहां तन्त्रियों में कोई सामूली चिट्ठी मिल गई, जिसका अट-बड कुछ दूसरा अर्थ भी निकलना हो, तो उसका जेल जाना निश्चित था। कितने ही नवयुवकों के लिए जेल भेज दिए जाते थे कि उनके विचार ‘सुतरनाक है।’ ‘राजनैतिक कारणों से’ कितनी ही गिरफ्तारियां होती थी, और राजनैतिक कारण का अर्थ चाहे जो कुछ भी समझ लिया जाता था। मेटपीटर्स और मेटपाल के भयकर जेद्गानों में सैकड़ों नवयुवकों मड रहे थे, कितनों ही को देश-निःशाला देकर साइबेरिया भेज दिया गया था और कितनों ही को फानी पर भी चटा दिया गया था। कुछ वर्षों पहले जिनके राजनैतिक विचार उन्नत भी थे, वे भी अब पुलिम में इतने डर गए थे कि नवयुवकों में मिलते हुए भी उन्हें नकोच होना था। तर्गेनेव ने अपने सुप्रसिद्ध उपन्यास ‘पिता और पुत्र’ में बड़ी गूबी के साथ यह दिखलाया है कि उन समय के पुराने विचारों के टरपीठ पिताओं और नए जमाने के माहगी नवयुवकों के बीच में एक गार्डनी गूदी हुई थी, उनके विचारों में बड़ा अंतर था। पिताओं और पुत्रों के बीच में अंतर होने की बात तो रही अलग, पंद्रह-बीस वर्ष के नवयुवकों तथा तीन वर्ष के उमर-वालों के विचारों में बड़ा फर्क पट गया था। उन समय में के नवयुवकों की विचित्र दशा में थे। पुराने खाल के पिताओं ने तो उन्हें जगद रचना ही पडता था, अपने में आठ-दस वर्ष अधिक उमरवाले बड़े भाइयों में भी उनका प्रबल मतभेद था। नवयुवकों के विचार साम्यवाद की ओर रुत रहे थे और वे पैंतीस वर्षवाले आदमी उन युवकों का साथ राजनैतिक मामलों में भी देने से डरते थे। फिर जोसॉटकिन लिखते हैं

“मेरे मन में प्रग्न होता है कि क्या रतिराम ने कितनी देर के नवयुवकों

को इतने भारी यज्ञ का मुकाबला ऐसी भयंकर स्थिति में करना पड़ा है ? इन नवयुवकों को इनके पिताओं और बड़े भाइयों तक ने त्याग दिया था । इन वैचारों का अपराध क्या था ? वस, यही कि उन्होंने अपने पिताओं और अग्रजों के विचारों को हृदयगम करके उन्हें अपने जीवन में चरितार्थ करने का प्रयत्न किया था । क्या इसमें भी कठिन तथा दुःखजनक परिस्थिति में कहीं किसी देश के नवयुवकों को न्यायोनता की लड़ाई लड़नी पड़ी है ?”

रूसी स्त्रियों में जागृति

जिन दिनों हम के नवयुवकों के हृदय में क्रांतिकारी भाव उत्पन्न हो रहे थे, उन्हीं दिनों रूसी लड़किया भी जागृत होकर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए आन्दोलन कर रही थी । प्रिन्स क्रोपोटकिन लिखते हैं :

“मेरी भानी स्त्रियों के विद्यालय में लौटकर मुझे मुनाया करती थी कि आज उन मामले पर युवतियों में बड़ी गरमागरम बहस हुई, कल इस विषय पर विचार होगा । कभी स्त्रियों के लिए विश्वविद्यालय खोलने की स्कीम गोची जाती थी, तो कभी उनके लिए उच्चकोटि की डाक्टरेसी बनाने के उपायों पर विचार किया जाता था । स्त्रियों को कैसे शिक्षा दी जानी चाहिए, इस विषय पर वाद-विवाद हुआ करने थे और सैकड़ों स्त्रियां उन बहस-मुवाहकों में बड़ी गभीरता और बड़े उत्साह के साथ भाग लिया करती थी । गरीब लड़कियों की मदद के लिए इन स्त्रियों ने अनुवादक-मञ्ज, छापेमाने, जिल्द-बंदी इत्यादि काम रोल गये थे । सैट्पीटम्वर्ग में अनेक युवतिया इगो आशा में आकर उल्टी होती थी कि उन्हें किसी प्रकार उच्च शिक्षा मिल जाय । गवर्नमेंट रूसी लड़कियों को विश्व-विद्यालय की शिक्षा देने की घोर विरोधी थी, इसलिए वे वैचारी अपना प्रवचन आप ही करती थी । गवर्नमेंट कहती थी कि हार्ट स्कूल की परीक्षा पास लड़कियों में उतनी योग्यता नहीं होती कि वे विश्वविद्यालय की पढ़ाई तो समझ सकें, इसलिए लड़किया कहती, “नो हमारे लिए प्रारंभिक गणनाओं का प्रवचन कर दो, जहाँ पढ़कर हम विश्व-विद्यालयों

में दाखिल होने की तैयारी कर सकें, पर गवर्नमेंट इन बात पर गजी नहीं थी। प्राइवेट तीर पर बड़े-बड़े अध्यापकों के वे व्याख्यान कराती थी। विज्य-विद्यालय के कितने ही अध्यापक, जो उनके साथ महानुभूति रखते थे, दिना एक पैसा लिये उन्हें पढा दिया करते थे। वे कहते थे कि अगर तुमने पैसे देने की बात कही तो हम इसमें अपना अपमान समझेगे। यद्यपि ये अध्यापक स्वयं गरीब थे, तथापि अपनी बहनो के अदम्य उत्साह को देखकर उनका हृदय द्रवित होगया था। भौतिक विज्ञान के अध्ययन के लिए यूनीवर्सिटी के अध्यापक विद्यार्थियों को साथ लेकर यानाओं पर बाहर जाया करते थे। इन यात्रियों में अधिकांश स्त्रिया ही होती थी। धारों के काम के लिए जो पाठ्य-क्रम नियत किया गया था, उस पाठ्यक्रम से वे सतुष्ट नहीं थी और अध्यापकों पर जोर डालकर उन्होंने उस पाठ्यक्रम को और भी बढ़वा लिया। उनकी ज्ञान-पिपासा इतनी बढ़ी हुई थी कि वे जहां-कहीं और जव-कभी मौका मिलता, अपने समाज के लिए उच्च शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करने की कोशिश करती। यदि उन्हें पता लग जाता कि अमुक अध्यापक महोदय इत्तार के दिन अपनी प्रयोगशाला में लटकियों को काम करने की इजाजत दे देंगे तो वन फिर गया था, वे उसके पास दौड़ जाती और इस अवसर से लाभ उठाती। यद्यपि जार का मंत्रिमंडल स्त्रियों को उच्च शिक्षा देने का घोर विरोधी था, तथापि उन लटकियों के उत्साह का दमन करना उसके लिए भी आसान नहीं था। भग्न भावी माताओं को शिक्षा-पद्धति सीखने में कौन रोक सकता था ? उन्होंने 'शिक्षण विद्यालय' खोल ही उल्ले। अब यह नवाल हुआ कि वनगति-गान्ध तथा गणित की शिक्षा-पद्धति किन प्रकार मिस्र गई जाय ? उनके लिए कोरमकोर सिद्धांतों से तो काम चल नहीं सकता था। इनके लिए आवश्यकता थी, इन विषयों की व्यावहारिक शिक्षा की। एतदर्थ इन विद्यालयों में वनस्पति-शास्त्र तथा गणित की भी उच्चकोटि की शिक्षा का प्रबंध करना पड़ा। पाठ्यक्रम ने सीप ही इन विषयों को भी न्याय दिया गया। वस, विश्वविद्यालय में प्रवेश करने के लिए एक नव्यतन्त्र आया। इस प्रकार धीरे-धीरे वे अपनी शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करने लगीं।

क्रोपॉटकिन ने आगे चल्कर लिखा है कि कितनी ही रूसी लड़कियां जर्मनी तथा स्विटजरलैंड में जाकर उच्च शिक्षा प्राप्त करने लगीं। उन्होंने कानून तथा इतिहास पढ़ने के लिए हीडलबर्ग के लिए प्रस्थान किया, गणित पढ़ने के लिए वे बर्लिन को चल पड़ीं और लगभग नौ लड़कियां ज्यूरिच में औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करती थीं। जार को यह बात बहुत नापसंद थी कि स्त्रियां उच्च शिक्षा प्राप्त करें। जब कभी जार को कोई लड़की चश्मा पहने हुए देख पड़ती, तो वह कांपने लगता था। उसके मन में यही आशंका होती थी कि कहीं यह लड़की क्रांतिकारी दल की न हो। सरकारी पुलिस उच्च शिक्षा-प्राप्त लड़कियों की बड़ी विरोधी थी और वह उनके विरुद्ध अधिकारियों के कान भरा करती थी, पर इतने पर भी स्त्रियों ने गवर्नमेंट की मुखालफ्त में अपने लिए कई शिक्षण-शालाएं खोल दीं। कितनी ही लड़कियां जब विदेशों में डाक्टरी परीक्षा पास करके लौटीं, तो उन्होंने अपने निजी खर्च से डाक्टरी स्कूल खोले और गवर्नमेंट को इस बात के लिए मजबूर किया कि वह उनके मार्ग में कोई रुकावट न डाले। अब जाग्राही के मिर पर एक फिक्क और सवार थी, वह यह कि विदेश में जाकर ये लड़कियां क्रांतिकारियों के संसर्ग में आती हैं और फिर उनके द्वारा रूस में क्रांतिकारी विचारों का प्रचार होता है। इनको विदेश जाने से कैसे रोकना जाय ? ज्यूरिच में जो लड़कियां शिक्षा प्राप्त कर रही थीं, क्रांतिकारियों के संसर्ग में बचाने के लिए बुला ली गईं। तब उन्होंने आंदोलन करना शुरू किया कि देश में ही स्त्रियों की उच्च शिक्षा के लिए विश्वविद्यालय हों, तो हम क्यों विदेश जाय ? वाक्विर तंग आकर गवर्नमेंट को स्त्रियों की शिक्षा के लिए चार विश्वविद्यालय खोलने ही पड़े। स्त्रियों के मेट्रिकल कालेज के मार्ग में जो-जो बाधाएं गवर्नमेंट की ओर से की गईं, उनका वर्णन करने की आवश्यकता नहीं, पर फिर भी ये स्त्रियां हतोत्साह न हुईं और बगवर उन्होंने अपनी पढ़ाई जारी रखी। मन् १८९९ तक लगभग सान गौ स्त्रियां रूस में परीक्षा पास करके डाक्टरी करने लगीं थीं।

प्रिय क्रोपॉटकिन इन स्त्रियों की आश्चर्यजनक सफलता के विषय में

लिखते हैं—“इस सफलता का मुख्य कारण यह था कि जो मित्रा उन आंदोलन में मुखिया बनकर भाग ले रही थी, जो इसकी आत्मा बना प्राप्त थी, वे अपने स्वार्थ के लिए नहीं लड़ रही थी। वे उन मित्रों में से नहीं थी, जो समाज में केवल अपना दर्जा ऊँचा करने के लिए लड़ती-झगड़ती हैं। सरकारों उच्च पदों की लालना उनके मन में नहीं थी। उनमें से अधिकांश की महानुभूति साधारण जनता के साथ थी। फैक्ट्रियों में काम करनेवाली लड़कियों के साथ उन्होंने मैत्री स्थापित कर ली थी और उनके हितों के लिए वे लोभी मालिकों तथा लागूची पृथ्वीपतियों में लड़ती थी। ग्राम्य पाठशाळाओं में शिक्षिका बनने की ओर उनकी विशेष रुचि थी। जिन अधिकांशों के लिए वे मित्रिया लड़ रही थी, वे केवल कुछ उने-गिने व्यक्तियों के ही अधिकार नहीं थे। वे सिर्फ यही नहीं चाहती थी कि हमको उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार मिल जाय, उनका उद्देश्य इतने बड़ी उच्च था, यानी वे सर्वनाशार्थी सेवा के लिए, दीन-हीन सभी समाज के लिए, अधिक उपयोगी महिला बनना चाहती थी। उनकी सफलता की असली कुजी यही थी।”

जो लोग आज भारतवर्ष में 'शक्ति-शक्ति' चिंतन करते हैं, उन्हें ट्रोपाटकिन के उपर्युक्त शब्दों पर ध्यान देना चाहिए। जबतक भारतीय स्त्री-समाज में इस प्रकार की निःस्वार्थ सेवा के भाव उत्पन्न नहीं होते, तबतक वास्तविक शक्ति होना संभव नहीं।

पिता की मृत्यु

सन् १८७१ में ट्रोपाटकिन के पिता की मृत्यु होगी। यह पुगाने खयाल के आदमी थे और उनी पुगानी धान-शौचत में रहना पसंद करने थे। पर पिछले कुछ वर्षों से उनके जान-पान की स्थिति में बहुत अवनति आगया था। अब दानत्व की प्रथा बंद होगी थी। जिनके गुजरन थे, उन्हें रपया दे दिया गया था और गुजरन मुक्त करा दिये गए थे। यह प्रथा उन लोगों ने थोड़े दिनों में ही भोग-विभोगमय जीवन में नष्ट कर दिया। अब इनकी जमीन तथा जायदादों पर व्यापारियों का अधिकार होगया। धर्मि-

कार मास्को छोड़कर इन लोगों को ग्रामों अथवा छोटे-छोटे कस्बों में चले जाना पड़ा। मास्को के उस प्रसिद्ध मुहल्ले में, जहाँ पहले घनाड्य-ही-घनाड्य रहते थे, अब दूसरी तरह के आदमी आकर बस गए। क्रोपाट्किन के रिश्तेदारों के बीच कुटुंब पहले इसी मुहल्ले में रहते थे, पर उनमें से अब केवल दो कुटुंब ही बाकी बचे थे, शेष डबर-उबर चले गए। ये दो कुटुंब भी समय की गति से प्रभावित हुए बिना न रहे। इन कुटुंबों से क्रोपाट्किन के पिता बड़ी घृणा करते थे, क्योंकि इन कुटुंबों में माताएं अपनी लड़कियों के साथ साधारण जनता के लिए विद्यालय और स्त्रियों के लिए विश्वविद्यालय इत्यादि नवीन विषयों पर बातचीत करती थीं। प्रिंस क्रोपाट्किन के पिता इस बात से अत्यंत असंतुष्ट थे कि उनके दोनों लड़के ऐलेक्जेंडर और क्रोपाट्किन ने उनकी आज्ञा का उल्लंघन किया था। वह चाहते थे कि हमारे लड़के सैनिक जीवन व्यतीत कर उसी पुरानी शान से रहे, पर यह बात दोनों को नापसंद थी। जब क्रोपाट्किन के पिताजी बहुत बीमार थे, तो दोनों भाई घर पहुंचे। पिताजी को आज्ञा थी कि दोनों भाई अपनी गलती को मंजूर करके पश्चात्ताप करेंगे, पर दोनों ने ऐसा नहीं किया। जब पिताजी ने इस विषय की चर्चा चलाई भी तो दोनों भाइयों ने हँसकर यही जवाब दिया—“आप हमारी ओर से किसी प्रकार की फिक्र न कीजिए। हम लोग बड़े मज्जे में हैं।” पिताजी को यह आज्ञा थी कि प्राचीन पद्धति के अनुसार दोनों लड़के धर्मा-वाचना करेंगे और रुपये भी मांगेंगे, पर उन्हें निराश होना पड़ा। रुपया न मागना उन्हें और भी खटका, लेकिन उनके हृदय में दोनों बच्चों की दृढ़ता के लिए सम्मान भी बढ गया। जब दोनों भाई पिताजी से अलग होने लगे तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ। ऐलेक्जेंडर को तो अपनी नौकरी पर जाना था और क्रोपाट्किन को फिनलैंड। यहीं उनकी अन्तिम भेंट थी। जब पिताजी का अन्ततः निवृत्त आया तो क्रोपाट्किन के पास खबर भेजी गई। वह तुरन्त फिनलैंड से लौटे, पर घर आकर उन्होंने अपने पिता का जनाजा निपलना देखा।

क्रोपाट्किन ने तरकाशील परिस्थिति का वर्णन करते आरंभिक टंग में

किया है। जिन आलीशान घरों में पुराने विचारों के बड़े-बड़े बनाए हुए कुटुंब रहते थे, अब वहां नई रोगनी के आदमी बग गए थे। बूढ़ों, अंग्रेजों तथा नवयुवकों में विचारों का नक्षत्र जारी था। एक जनरलमाह्व के एक लड़की थी। वह मास्को में स्त्रियों के लिए खुले नवीन विद्यालय में पढ़ना चाहती थी, पर जनरलमाह्व तथा उनकी माता दोनों इन बातों को निहायत नापसंद करते थे। दो बरस तक वह लड़की अपने माता-पिता से जगजगी रही और तब कही उसे इस बात की इजाजत मिली कि वह विद्यालय में पढ़े और सो भी इस शर्त पर कि उसकी माता नित्यप्रति उसके माता-विद्यालय में जाया करेगी! माता बराबर हर रोज अपनी लड़की को विद्यालय में ले जाती और अन्य बालिकाओं के साथ वह भी घंटों तक अपनी लड़की के साथ बैठी रहती, पर इस तमाम देगमाह्व और नियंत्रण के होने हुए भी दो वर्ष के भीतर ही लड़की के विचार क्रांतिकारी हो गए। वह एक प्राविशारी दल में सम्मिलित होगई! पकड़ी गई और गालभर के लिए उसे गैट-पीटन तथा सेंट-गॉल के भयंकर जेलखानों की हवा भी चानी पड़ी।

पाम ही उसी मुहूर्ते में एक और कुटुंब रहता था। काउंट महाशय तथा उनकी स्त्री का बड़ा कठोर सामन था। वे थे पुराने विचारों के, और उनकी लड़कियां थी नई रोगनीवाली। लड़कियों को निरर्थक आलस्यमय जीवन बहुत अस्वस्ता था, वे उनमें तब आगर्त ही और अपनी अन्य सहेलियों की तरह स्वतंत्रतापूर्वक विद्यालय में पढ़ना चाहती थीं, पर कठोर माता-पिता भला इसकी अनुमति क्यों देने लगे! ज्यों तब माता-पिता तथा पुत्रियों का झगडा चरता रहा। आखिर चधी लड़की ने निर्गत होकर चहर त्वा लिया और अपनी जीवन-नीला नमाप्त कर दी। तब चरी छोटी बहन को विद्यालय में जाने की छूट मिली।

जिन घरों में पहले प्राचीन प्रथा के पोषक जमींदार रहते थे, तब अब क्रांतिकारियों के अड्डे हो गए।

स्विट्ज़रलैंड की यात्रा

सन् १८७२ में क्रोपॉटकिन ने स्विट्ज़रलैंड की यात्रा की। वहाँ वह अंतर्राष्ट्रीय मजदूर संघ के कार्यकर्ताओं से मिले। मजदूरों की जागृति के लिए जो आंदोलन अन्य देशों में हो रहे थे उनके विषय में अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए उनकी अभिलाषा बढ़ने लगी। क्रोपॉटकिन की भाँनी उन दिनों ज्यूरिच में पढ़ रही थी। उन्होंने क्रोपॉटकिन को बहुत-सा साहित्य लाकर दिया। दिन-रात क्रोपॉटकिन उसी साहित्य के पढ़ने में व्यस्त रहने लगे। क्रोपॉटकिन लिखते हैं :

“उस समय मैंने जो-कुछ अध्ययन किया, उसका अमिट असर मेरे दिमाग पर हुआ। मुझे अब भी उस छोटी-सी कोठरी की याद है, जिसमें बैठकर मैंने उस साहित्य का अध्ययन किया था। उस कोठरी में एक खिड़की थी, जिसके सामने एक विशाल नील झील दीरा पड़ती थी, और कुछ फासले पर पहाड़ियाँ नज़र आती थीं। इन्हीं पहाड़ियों के निकट स्विट्ज़रलैंड के निवासियों ने अपनी स्वाधीनता के लिए अनेक लड़ाइयाँ लड़ी थीं। वह दृश्य अनेक पुण्यमय संग्रामों की याद दिलाता था।”

साम्यवादी साहित्य की विशेषता

जिस साम्यवादी साहित्य का अध्ययन क्रोपॉटकिन कर रहे थे, उसका जिक्र करते हुए वह लिखते हैं :

“साम्यवादियों के साहित्य में बड़े-बड़े पोथे नहीं हैं। यह साहित्य शरीर आदमियों के लिए लिखा जाता है और शरीरों के पाम दो-चार आने से अधिक ग्रन्थ करने के लिए होता नहीं, इसलिए साम्यवादी साहित्य की मुख्य शक्ति उसकी छोटी-छोटी पैमपलेटों और समाचारपत्रों के लेखों में ही होती है। इसके बिना साम्यवाद के ग्रन्थों में वह चीज़ मिल भी नहीं सकती, जिसकी आवश्यकता इन विषयों के प्रेमियों को हुआ करती है। ग्रन्थों में तो निर्णय सिद्धांतों का वर्णन रहता है और उन सिद्धांतों के समर्थन में वैज्ञानिक

युक्तियाँ गृह्णीत हैं, पर जो असली चीज हैं, यानी मजदूर लोग इन सिद्धांतों को किस प्रकार ग्रहण करते हैं और ये सिद्धांत व्यवहार में कैसे लागू जा सकने हैं, इन बातों के जानने के लिए साम्यवादी समाचारपत्रों का पटना अत्यंत आवश्यक है। केवल अप्रलेख ही नहीं, बल्कि खबरें भी पटना चाहिए, जो रेलों की अपेक्षा खबरों को पटना और भी अधिक आवश्यक है। आंदोलन की गहराई और उसके नैतिक प्रभाव का अंदाज इन खबरों से ही लग सकता है। कोरमकोर सिद्धांतों से कुछ समझ में नहीं आता। जरूरत इन बातों के जानने की है कि ये सिद्धांत कहातक साधारण जनता के हृदय तक पहुंच गए हैं, और कहातक वे अपने दैनिक जीवन में उन सिद्धांतों को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए तैयार हैं।”

मजदूरों के साथ निवास

साम्यवादी साहित्य को पढ़कर फ्रॉपॉटविन को एक नई दुनिया का दृश्य दीखने लगा, वह दुनिया, जिनके विषय में समाज-शास्त्रों के सिद्धांतों के विद्वान् रचयिता विरगुल नहीं जानते, यानी मजदूर-समाज, जिनका मर्यादा ज्ञान उनके बीच में रहकर ही हो सकता है। वन, फ्रॉपॉटविन ने यही निश्चय किया कि दो महीने मजदूरों के बीच में गुजारे जाय। एनींग् वे यूरिच में चलकर जिनेवा पहुंचे। महापुरुष उन्हें मजदूरों के साथ रहने और उनकी हालत देखने का अच्छा अवसर मिला। जब देश में मजदूर-संगठन का आंदोलन शुरू होता है तो उनका मजदूरों पर कैसा प्रभाव पड़ता है, इसका जिक्र करते हुए फ्रॉपॉटविन लिखते हैं :

“बिना मजदूरों के साथ रहे, इन बातों का पता ही नहीं लग सकता कि संगठन का प्रभाव मजदूरों के दिमाग पर कैसा पड़ता है। वे इस संगठन में पूरा-पूरा विश्वास करने लगते हैं, जब वही उनके विषय में सीखते हैं, तो बड़े प्रेम के साथ और हर तरह से उनकी महापिता बनने के लिए आत्म-त्याग करने को उद्यत रहते हैं। हर रोज हजारों ही मजदूर अपना समय देने हैं और भूखी मरकर बचाये हुए पैसे देते हैं। उन्हें इन बातों का पता

रहती है कि हमारे चलाए हुए पत्र कहीं बंद न हो जायं। अपनी मजदूर-कांग्रेस के अधिवेशनों के लिए जो खर्च होता है, उसकी भी फिक्र उन्हें रहती है और अपना काम करते हुए जो साथी जेल जाते हैं या अन्य प्रकार से दंडित होते हैं, उनकी भी वे मदद करते हैं।....बाहर-वाले इस बात का अंदाज लगा ही नहीं सकते कि मजदूरों को अपने आंदोलन के जीवित रखने के लिए कितना आत्म-त्याग करना पड़ता है। जिनेवा में मैंने देखा कि अंतर्राष्ट्रीय मजदूर-संघ का मेबर होना भी मजदूरों के लिए कोई कम साहस का काम नहीं था। उसके लिए भी बड़े नैतिक साहस की जरूरत थी, क्योंकि उससे मालिक लोग नाराज हो सकते और नौकरी से बरखास्त तक कर सकते थे। बरखास्त होने पर महीनो तक घर बैठे रहना पड़ता था। मजदूर-संघ में शामिल होने पर कुछ-न-कुछ चढ़ा देना ही पड़ता था, और यह चढ़ा एक मामूली गरीब मजदूर के लिए अपनी धुंध आमदनी में से निकालना कोई बानाना बात नहीं थी। मीटिंग में जाना भी इन बेचारों के लिए एक प्रकार का त्याग ही था, क्योंकि मजदूरी करने के बाद जो घंटे बच रहते हैं, वे उनके आराम के लिए ही काफी नहीं थे, और दो घंटे मीटिंग में खर्च करने के मानी थे दो घंटे आराम में कमी करना। ये मजदूर शिक्षा प्राप्त करने के लिए अत्यंत उत्सुक थे, पर उन शिक्षित स्वयंसेवकों की, जो इन लोगों को पढ़ाने के लिए उद्यत थे, संख्या अत्यल्प थी। बड़ी जरूरत इस बात की थी कि वे शिक्षित आदमी, जिनके पास अवकाश हो, इन मजदूरों के पास आकर उन्हें अपना संगठन करना सिखलाते, लेकिन ऐसे आदमी बहुत कम थे, जो इन गरीब मजदूरों की निस्वार्थ भाव में सेवा करने के लिए उद्यत हों। वैसे इनकी निम्नहाय अवस्था में लाभ उठाकर अपना राजनैतिक महत्व बढ़ानेवाले आदमियों की कमी नहीं थी। ज्यों-ज्यों मैं इन मजदूरों के साथ रहा, मेरा यह विश्वास दृढ़ होना गया कि इन गरीब मजदूरों की सेवा करना ही मेरे जीवन का प्रधान उद्देश्य है। स्टैपनियाक नामक क्रांतिकारी ने एक जगह लिखा है—'प्रत्येक क्रांतिकारी के जीवन में एक क्षण ऐसा

आता है—चाहे उन क्षण की घटना विल्कुल क्षुद्र ही हो—जब वह उस वात की कगल ग्रा लेता है कि मैं अपना मारा जीवन शक्ति के लिए अर्पित कर दूंगा।' वह क्षण मेरे जीवन में भी आया था। ज्यूनिवर्सिटी में रहते हुए मैंने देखा कि वे शिक्षित आदमी कितने कायर होते हैं, जो अपने ज्ञान और अपनी शक्तियों को उन लोगों की सेवा में अर्पित करने में गकोच करते हैं, जिन्हें ज्ञान तथा शक्ति की इनकी अधिक आवश्यकता है। मैंने दिल में कहा, 'दिग्गो ये मजदूर अपनी गुलामी का अनुभव कर रहे हैं। ये उन दाम्ता ने अपना पिंड छुटाना चाहते हैं, पर इनके मददगार कौन हैं और कहा है? कहा है वे आदमी, जो सर्वमाधारण की सेवा करने के लिए आगे आये—ऐसे आदमी नहीं, जो अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए इन बेचारों का उपयोग करके अपना मतलब गाठते हैं?'

श्रीपांडेकिन की ये बातें भारतीय मजदूरों की वर्तमान स्थिति में कितनी मिलती-जुगती हैं? मजदूरों की निस्सहाय अवस्था में न्यान उठाकर अपना उरलू गीधा करनेवाले और उनकी मदद में अपना राजगनिह महत्व बढ़ानेवालों की इस देश में भी कमी नहीं है, पर श्रीपांडेकिन की तरह निस्वार्थ सेवकों का तो अभाव ही समझिए।

अराजकवादी कैसे बने ?

प्रिंस श्रीपांडेकिन जिनेवा में अवसर जिन मजदूर-नेताओं के सम्पर्क में आए थे, वे बाहर फ्लेटफार्म पर जोर-जोर के लेखर जाते थे, पर भीतर-ही-भीतर वही तिकड़मवाजी में काम लेते थे। श्रीपांडेकिन को उनकी यह दुरगी चाले बहुत नापसंद आईं। उन्होंने एक नेता से कहा—“अन्तर्जातीय मजदूरसभ की एक शान्ता भी तो है, जो वार्कनिन्ट के नाम से प्रसिद्ध है (अनार्किस्ट शब्द का व्यवहार तबतक नहीं हुआ था), मैं उनसे परिचय करना चाहता हूँ।” उस नेता ने श्रीपांडेकिन को एक परिचय-पत्र दे दिया, और फिर श्रीपांडेकिन ने कहा—“मारुम होता है कि अब आप हमारे देश में वापस नहीं आयेंगे। आप उन्हींके पास रह जायेंगे।” श्रीपांडेकिन लिखते हैं—

‘इन महाशय का अनुमान ठीक ही निकला।’

एक अराजकवादी नेता से मुलाकात

जूरा पहाड के निकट घड़ी बनानेवाले मजदूरों का एक सघ था। पहले तो क्रोपॉटकिन वहां जाकर एक सप्ताह रहे, पीछे वहां अराजकवादियों के नेताओं से मिलने का निश्चय किया। एक नेता का नाम था जेम्स गुलीम। ये महाशय एक छोटे-से प्रेस के मैनेजर थे और प्रफ-रीडिंग का काम करते थे। इस काम से उन्हें इतनी कम आमदनी होती थी कि उन्हें रात के समय बैठकर जर्मन भाषा से फ्रेंच में अनुवाद करना पड़ता था, जिसके लिए उन्हें ५) ६० फार्म मिलता था। क्रोपॉटकिन लिखते हैं :

“जब मैं जेम्स गुलीम से मिलने के लिए गया और दो घंटे बातचीत करने के लिए भागे, तो उसने कहा—‘मुझे खेद है कि दो घंटे अपने वयत में से मैं नहीं बचा सकता। मेरे प्रेस में आज शाम को एक स्थानीय पत्र का प्रथम अंक निकलनेवाला है। मुझे उगके प्रूफ तो देखने ही पड़ेंगे, साथ ही उसका संपादन भी करना पड़ेगा। पत्रों को लपेटकर उनपर पते लिखने के लिए कागज भी मुझे ही चिपकाने पड़ेंगे, और फिर लगभग एक हजार पते भी मुझे अपने हाथों में लिखने पड़ेंगे।’ मैंने कहा—‘पते लिखने का काम मेरे जिम्मे रहा।’ उनसे जवाब दिया, ‘यह ही नहीं सकता, क्योंकि अधिकांश पते मुझे याद करने पड़े हैं, वे कहीं लिखे हुए नहीं रखे और जो थोड़े-से लिखे हुए हैं भी, वे ऐसे हस्ताक्षरों में कागज के टुकड़ों पर लिखे पड़े हैं कि उन्हें हमारा कोई पत्र नहीं सकता।’ तब मैंने कहा—‘तो फिर मैं आज शाम को आकर आपके पत्रों को लपेटकर उनपर पते लिखने के लिए कागज ही चिपका दूंगा। उनमें आपका जो थोड़ा-सा समय बच जायगा, वह आप मुझे दे दीजिए।’”

यह सुनकर जेम्स गुलीम ने क्रोपॉटकिन से हाथ मिलाया और कहा—
“तुम्हारी बात मंजूर है, शाम को आना।” दोपहर के समय क्रोपॉटकिन वहां पहुंचे और उन्होंने शाम तक अगवारा में चिट्ठें चिपकाईं। गुलीम उनपर

पते लिखते रहे । जब रात होने को आई तो गुलाम ने काम पर से छुट्टी ली और दो घंटे फ्रोंपॉटकिन से वानचीत के लिए निकाले । दोनों बाहर टहलने के लिए गए, और फिर वहा से लौटकर गुलामी को जूरा फेडरेशन की अराजकवादी पत्रिका का संपादन करना पडा ।

रूस को घापसी

जबतक फ्रोंपॉटकिन रिक्ट्जरलैंड में रहे, वह अराजकवाद के सिद्धांतों का अच्छी तरह अध्ययन करते रहे, या यो कहना चाहिए कि यहीपर वह अराजकवादी बने । यहीपर उनके विचारों में दृढ़ता भी आई । क्रांति के विषय में भी उनके विचार स्पष्ट होने लगे । वह लिखते हैं :

“स्विट्जरलैंड में रहकर धीरे-धीरे यह बात मेरी समझ में आने लगी कि जब विकास धीरे-धीरे होने के बजाय बहुत तेजी से एक माय होने लगता है तभी उसे क्रांति कहते हैं, और क्रांति भी मनुष्य-जाति के लिए उतनी ही स्वाभाविक है, जितना कि धीरे-धीरे क्रम-विक्रम । यह क्रम-विक्रम तो सम्य समाज में बराबर होता ही रहता है । जब कभी क्रांति (या यो कहिए शीघ्र-विकास) का प्रारंभ होता है, तो उसके साथ थोडा-बहुत गृह-युद्ध भी प्रायः शुरू हो जाता है । देश के निवासियों में आपस में गून-सच्चर होने लगता है । उस समय यह सवाल नहीं उठना चाहिए कि क्रांति कैसे रोकी जाय, बल्कि यह प्रश्न होना चाहिए कि कम-से-कम गून-सच्चर ने अधिक-से-अधिक लाभ कैसे उठाया जाय । कम-से-कम आदमों हताहत हो, कम-से-कम मात्रा में पारस्परिक विद्वेष फैले और क्रांति का उद्देश्य पूरा हो ही जाय । इसके लिए सर्वोत्तम उपाय यही है कि समाज के अत्याचार-पीडित भाग को यह बात साफ तौर पर बतला दी जाय कि उनका उद्देश्य बरा है । जदनक पीडित समाज को अपने ध्येय का बिल्कुल स्पष्ट ज्ञान न होगा, तदतक उनमें उनकी प्राप्ति के लिए उरयुक्त उत्साह नहीं हो सकता और दिना उत्साह के क्रांति में मफलता मित्र ही नहीं मजती । यदि अत्याचार-पीडित समाज अपना ध्येय बिल्कुल साफ तौर पर निश्चित कर ले तो घनाद्व

और मुद्रित जनता में जो भले आदमी हैं, उनमें से कुछ तो उमका साथ देने की अवश्य तैयार हो जायेंगे।”

ज्वल की हुई किताबों का रूस में प्रवेश

जब क्रोपॉटकिन स्वदेश को वापस आने लगे तो उन्होंने सोचा कि अब इकट्ठे किये हुए मनाले का क्या करना चाहिए। रूस में तो उमकी विल्कुल मनाई थी और वहाँ के क्रांतिकारियों को इस साहित्य की बड़ी आवश्यकता थी। वहाँ वह किमी दाम पर भी नहीं मिलता था। आगिरकार उन्होंने यही तय किया कि वैसे ही जैसे इन साहित्य को रूस में प्रवेश कराना ही चाहिए। वियना और वारसा होते हुए वे मंटपीटमंवरग को लींटे। उन दिनों कितने ही यहूदियों का यह काम था कि वे ज्वल-शुदा किताबें इसी तरह रूस में भेजकर अपनी गुजर करते थे। एक यहूदी के मारफत उन्होंने अपना मारा मनाला रूस को भिजवा दिया, जो किसी अगले स्टेशन पर उन्हें ज्यों-का-त्यों मिल गया।

निहिलिस्ट संप्रदाय

रूस में उन दिनों नवयुवकों में एक विशेष प्रकार की मनोवृत्ति का विकास हो रहा था। पिछले २५० वर्षों में, जब रूस में दामत्व-प्रथा बनी हुई थी, अनेक ढांग और दमपूर्ण प्रथाएँ प्रचलित होगई थी और इन प्रथाओं ने शिष्टाचार का रूप धारण कर लिया था। मनुष्यों के व्यक्तित्व का कोई खयाल नहीं किया जाता था। पिता लोग अपने पुत्रों पर जोर-जबरदस्ती करते थे। म्रिया, लडकिया और पुत्रों का भी आचरण कपट-पूर्ण होगया था। रूस का मंपूर्ण जीवन इसी दम तथा कपट का जीवन था। पुगने रीति-रिवाजों, दमपूर्ण कुप्रथाओं और नैतिक वायगनाओं ने धार्मिकता का रूप धारण कर लिया था। सरकारी कानून से तो इन कुप्रथाओं का अन् किया नहीं जा सकता था। इनके लिए तो आवश्यकता थी एक सामाजिक विद्रोह की, जिसमें कि यह कपटाचरण जड़-मूल से नष्ट होजाय।

रूसी युवकों ने यह विद्रोह किया, और यह विद्रोह इतना अधिक व्यापक हुआ, जितना यूरोप तथा अमेरिका में भी नहीं हुआ था। नुप्रसिद्ध रूसी लेखक तुर्गनेव ने इस विद्रोह को 'निहिलिज्म' का नाम दिया था। इस शब्द का प्रयोग पहले-पहल उनके युगांतरकारी उपन्यास 'फार्म एण्ड चिल्ड्रन' ('पिता और पुत्र') में हुआ था।

सबसे पहला काम जो निहिलिस्ट लोगों ने किया, वह था 'सम्य' मानव-समाज के ढोंगों का विरोध, उन ढोंगों का जिन्होंने गिष्ट आचरण का रूप धारण कर लिया था। निहिलिस्ट लोगों का सर्वश्रेष्ठ गुण था पूर्ण सच्चाई। वे बुद्धिवादी थे, और किसी भी ऐसी रीति-रिवाज को, जो उनकी नमज़ में अक्ल के खिलाफ थी, मानने के लिए तैयार नहीं थे। प्रिन्स क्रोपोटकिन लिखते हैं :

"सम्य कहलानेवाले आदमियों के जीवन छोटे-छोटे शिष्टतापूर्ण झूठों से भरे हुए होते हैं। सम्य समाज में ऐसे बहुत-से आदमी देखने में आते हैं, जो मन में तो एक-दूसरे ने घोर घृणा करते हैं, पर जब अकस्मात् कहीं मिल जाते हैं, तो अपने चेहरे से बड़ी प्रफुल्लता और मधुर मुस्कराहट जाहिर करते हैं, और यह दिखलाते हैं, मानों उन्हें एक-दूसरे से मिलकर बड़ी भारी खुशी हुई हो। निहिलिस्ट लोग इस प्रकार के दमपूर्ण दर्ताव से घृणा करते थे। वे तभी मुस्कराते थे, जब किसी आदमी ने मिलकर उन्हें हार्दिक प्रसन्नता हुई हो। सारी ऊपरी दिग्गवद की नम्रताओं से, जो दरअसल दम का ही दूसरा रूप होती हैं, वे नफरत करते थे। इन निहिलिस्ट लोगों की प्रवृत्ति अपने पिताओं की प्रवृत्ति से विन्मुक्त भिन्न थी।

"जिन पीढ़ी के पिता थे, वह ऊपरी मिलनकारी, नम्रता और आद-भगत में तो कमाल की होशियारी जाहिर करती थी, पर भीतर उनका हृदय बड़ा कठोर था। अपने बच्चों, स्त्रियों तथा दानों के हाथ इन पीढ़ी का दर्ताव जानबूझकर जैसा था, पर यह पीढ़ी ऊपर से बड़ी भावुक प्रतीत होती थी। निहिलिस्ट लोग इस भयकर लाजवरपूर्ण भावुकता के विरोधी थे। निहिलि-

लिस्ट लोगों के पूर्व की पीढी 'साँदर्य', 'आदर्श', 'कला के लिए कला', तथा 'साँदर्य-विज्ञान' इत्यादि विषयों पर बड़ी मौज के साथ चर्चा मारा करती थी, और कभी इन बातों का खयाल भी नहीं करती थी कि कला की ये मुदर चीजें उस रुपये से खरीदी जाती हैं, जो गरीबों का खून चूमकर इकट्ठा किया जाता है। भूखों मरनेवाले विद्वानों की कमाई में और आधे पेट रहनेवाले मजदूरों के वेतन में छीनकर इकट्ठे किये हुए रुपये में ये 'साँदर्य-प्रेमी' कला की चीजों को खरीदते थे। वस, यह बात निहिलिस्ट लोगों को मुहाती न थी और वे टॉल्स्टाय के शब्दों में कहा करते थे—'एक जोड़ी जूता तुम्हारे तमाम मुदर-से-मुदर चित्रों तथा शेक्सपीयर के विषय में तुम्हारे नमापणों में कहीं अधिक उपयोगी है।' निहिलिस्ट लोगों के मिढातों का प्रचार केवल लड़कों में ही नहीं, लड़कियों में भी हो गया था। अमीर घरानों की अनेक लड़कियाँ अपने माता-पिताओं के घरों को छोड़कर निकल पड़ी थीं। उन्होंने गुडियों की तरह रहना और रेजमी कपड़े पहनना पसंद नहीं किया, और बजाय इसके वे मोटे-मे-मोटे ऊनी कपड़े पहने तथा अपने बाल कटाए हुए हाई-स्कूलों में पढ़ने जाने लगीं। अपनी व्यक्तिगत स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए उन्होंने अनेक कष्ट सहना अंगीकार किया। जिन स्त्रियों ने देखा कि उनके तथा उनके पतियों के बीच में कोई मच्चा स्नेह नहीं रहा है, और कानूनी विवाह बाहर से भीतरी प्रेमभाव को ढके हुए है, वे अपने पतियों को छोड़कर अलग हो गईं। ऐसी स्त्रियों को अपने बच्चों के साथ गरीबी का मुकाबला करना पड़ा, पर उन्होंने अपनी आत्मा की विगोधी तथा अपने स्वभाव के सर्वोत्तम गुणों की नाजक पहले की दमपूर्ण परिस्थिति से इसे कहीं अच्छा समझा।

“निहिलिस्ट लोग नित्यप्रति की छोटी-छोटी बातों में भी मच्चाई में काम लेते थे। समाज में बातचीत करने का जो परंपरागत ढंग था, उसे भी निहिलिस्ट लोगों ने निग्रांजलि दे दी थी, और जो कुछ उन्हें कहना होता था, उसे मक्षेप में और खरे ढंग में कह देने थे, बल्कि ऊपर से कुछ ख्यापन भी चाहिए करने थे।”

प्रोपॉटकिन का लिखा हुआ निहितलिस्ट लोगों का विवरण मच्चमुच बढ़ा मनोरञ्जक है। हमारे यहां के युवक-आदोल्लनो में निहितलिस्ट लोगों की-सी स्पष्टवादिता तथा दम-हीनता की नितात आवश्यकता है।

साधारण जनता की ओर

मन् १८६०-१८६५ में यानी आज से ९५ वर्ष पूर्व स्त्री नवयुवको ने जो कार्य कर दिखाया था, वह अभी हमारे यहां प्रारंभ ही नहीं हुआ। वह काम था सर्वसाधारण की—गाववालों की—सेवा का। प्रिंग प्रोपा-टकिन लिखते हैं।

“हजारों ही स्त्री नवयुवक मादा जीवन व्यतीत करते हुए सर्वसाधारण की सेवा कर रहे थे। उनका ध्येय था ‘जनता की ओर चलो’ ‘सर्वसाधारण की तरफ रहो’ (To the people, be the people)। उन समय स्त्रियों के अमीर घरानों के माता-पिताओं तथा पुत्र-पुत्रियों में एक तरह का संघर्ष-ना छिड़ हुआ था। माता-पिता यह चाहते थे कि हमारे लड़के तथा लड़कियां प्राचीन परंपरा को कायम रने, पर यह नई पीढ़ी अपने जीवन को अपने आदर्शों के ढाले में ढालना चाहती थी। नवयुवको ने फौज की, बैंकों की तथा दुकानों की नौकरी छोड़ दी और वे उन नगरों में जाकर झगड़ते-झगड़ते हुए, जहां विश्वविद्यालय थे। बड़े-बड़े घरानों की लड़कियां बिना पैने के सेंटपीटर्सबर्ग तथा मास्को को आती थी और वहां आकर कोई ऐसा धंधा सीखती थी, जिमने उन्हें स्वाधीनता मिले। बड़े-बड़ी कठिनाइयों के बाद उन्हें यह स्वाधीनता मिली, पर यह स्वाधीनता उन्होंने अपने सुख-उपभोग के लिए प्राप्त नहीं की थी, बल्कि वे यही चाहती थीं कि उन ज्ञान को वे साधारण जनता तक—गरीब किसान-भगदूंगे तक—ले जायं, जिमने उन्हें पराधीनता से मुक्त किया था। स्त्रियों के प्रत्येक नगर में और सेंटपीटर्सबर्ग के प्रत्येक मूर्खले में लड़को तथा लड़कियों के छोटे-छोटे समूह बन गये थे, जिनका उद्देश्य था आत्म-शिक्षण तथा आत्मोन्नति। इन समूहों में तत्त्ववेत्ताओं के लेख, अर्थशास्त्रियों के प्रबंध तथा इतिहास-

लेखको के गवेषणापूर्ण निबंध पढ़े जाते थे और फिर उनपर सूत्र वहम होती थी, पर इस निबंध-पाठ तथा वाद-विवाद का उद्देश्य एक ही था, यानी 'हम लोग साधारण जनता (Masses) के लिए किस प्रकार उपयोगी बनें।' धीरे-धीरे ये युवतियां और नवयुवक इस परिणाम पर पहुंचे कि साधारण जनता की सेवा करने का एक ही उपाय है, यानी उनके बीच में जाकर बसना और उन्हीं-जैसी जिदगी व्यतीत करना। ये नवयुवक डाक्टर, कपाउटर, शिक्षक, लुहार, बर्ड्स तथा मजदूर इत्यादि वनकर ग्रामों में पहुंचे और गाववालों के साथ रहने लगे। लड़कियों ने शिक्षिकाओं तथा दाइयों और नर्सों का काम सीखा और नैकड़ों की तादाद में गावों में पहुंच कर वहां गरीब-से-गरीब आदमियों की सेवा करने लगी। ये नवयुवक और ये युवतियां समाज-संगठन या क्रांति के विचारों के उद्देश्य से ग्रामों में नहीं गई थीं। उस वक्त उन्हें इसका खयाल भी नहीं था। उस वक्त तो उनका उद्देश्य केवल यही था कि जनता को लिखना-पढ़ना सिखाया जाय, बीमार पड़ने पर उनके लिए दवा का प्रबंध किया जाय तथा अज्ञानांधकार से उन्हें निकालकर ज्ञान के प्रकाश में लाया जाय। साथ ही ये युवक ग्रामवासियों के विचारों से भी परिचित होना चाहते थे। वे यह जानना चाहते थे कि समाज-सुधार के विषय में इनके क्या खयाल हैं।"

हमारे देश के नवयुवक प्रिंस क्रोपॉटकिन को इन बातों को पढ़ें और फिर सोचें कि क्रांति किस चीज को कहते हैं, और उसके लिए प्रारंभिक तैयारी किस तपस्या तथा त्याग के साथ की जाती है। क्रांति का नारा लगाना आसान काम है, लेकिन सच्ची क्रांति की तैयारी में योग देना बड़ा ही कठिन है।

सत्साहित्य का प्रचार

उन दिनों रूस की ठीक वैसी ही हालत थी, जैसी कि कुछ वर्ष पहले भारतवर्ष की थी। पद्यत्रो का सफलतापूर्वक संचालन करना संभव नहीं था। मन् १८६९ में नीचेफ नामक एक रशियन ने एक पद्यत्रकारिणी मस्या

कायम की थी, पर उसे सफलता नहीं मिली। जितने मदस्य इस सभा के बने थे, सब पकड़ लिये गए, और इस के सर्वश्रेष्ठ युवको को देश-निकाला देकर माउवैरिया भेज दिया गया। बेचारे कुछ काम भी न कर पाए। पड-यत्रकारियों को प्रायः अमृत्य और घोखेवाजी का भी आश्रय लेना पड़ता है और नीचेफ के साथी भी उन सब घूर्तताओं से काम लेते थे। उन्हीं दिनों इन पड्यत्रकारी युवको की कार्य-पद्धति के विरोध में दूसरे युवको ने एक और मस्या कायम की थी, जिसका नाम था 'चेकोवस्की का सत्मग'। इस सत्मग ने रूस के सामाजिक आंदोलन में काफी भाग लिया था और इसके द्वारा आगे चलकर दंडा जवरदस्त काम हुआ। प्रिंस क्रोपॉटकिन इस सत्मग के मदस्य बन गए। इस सत्था का उद्देश्य था आत्म-शिक्षण। इस मस्या के मदस्यों ने यह बात पहले ही समझ ली थी कि यदि हम किसी सत्था को चिरस्थायी बनाना चाहते हैं तो उसकी नींव सच्चरित्रता पर पर रगी जानी चाहिए। प्रिंस क्रोपॉटकिन ने इसका जिक्र करते हुए एक बड़ा महत्वपूर्ण वाक्य लिखा है, जिसकी ओर उन सबको, जो भारत में सत्थाओं के मचालक हैं, ध्यान देना चाहिए। वह लिखते हैं—'उन थोड़े-से मित्रों ने, जिन्होंने चेकोवस्की के सत्मग की स्थापना की थी, यह बात अच्छी तरह समझ ली थी (और उनकी यह समझ बिल्कुल ठीक भी थी) कि प्रत्येक मरया के मूल में नैतिक दृष्टि से विकसित (सच्चरित्रता-युक्त) व्यक्तित्व होना चाहिए, आगे चलकर उस सत्था का चाहे जो राजनैतिक रूप हो और भविष्य में यह चाहे जो कार्यक्रम निश्चित करे।'

प्रिंस क्रोपॉटकिन की यह बात कितने तजुरबे की है। जो लोग झूठ, दगावाजी और फरेव का आश्रय लेकर देश का उद्धार करना चाहते हैं और जो अपने विरोधियों के पतन के लिए किसी भी तरह के ह्ये उपाय काम में ला सकते हैं, वे इन पक्तियों को पढ़ें।

चेकोवस्की के सत्मग में ऐसे ही व्यक्ति थे, जो नीतिवान् थे। क्रोपॉटकिन लिखते हैं— "यही कारण था कि चेकोवस्की के सत्मग का कार्य-क्रम धीरे-धीरे काफी व्यापक बन गया और उनकी शाखाएँ तमाम

रूस देश में फैल गई। आगे चलकर जब गवर्नमेंट के घोर अत्याचारों के कारण देश में क्रांतिकारी सग्राम शुरू हुआ तो इस सत्संग ने कितने ही ऐसे स्त्री और पुरुष उत्पन्न किए, जिन्होंने रूस की जारशाही के विरुद्ध युद्ध करते हुए अपने प्राण अर्पित कर दिये।”

क्रोपाटकिन इस सत्संग की प्रारम्भिक दशा का वर्णन इस प्रकार करते हैं—“सन् १८७२ में इस सत्संग के सामने कोई क्रांतिकारी कार्यक्रम नहीं था। उस समय उसका एकमात्र उद्देश्य था ‘आत्म-शिक्षण’, पर यदि इसका उद्देश्य यही तक परिमित रहता, तब तो, जैसा कि प्रायः मठों में हुआ करता है, उसकी उन्नति रुक जाती, पर सदस्यों ने एक उपयुक्त कार्य अपने लिए चुन लिया था, और वह था सत्साहित्य का प्रचार। ये लोग अच्छी-अच्छी पुस्तकें खरीदते, मसलन मार्क्स की किताबें, रूस के ऐतिहासिक ग्रंथ और मजदूरों की हालत से संबंध रखनेवाली किताबें इत्यादि। सत्संग के सदस्य इन किताबों को खरीदकर प्रांतीय नगरों के पाठकों तक पहुंचाते थे। थोड़े दिनों में यह कार्य इतना व्यापक होगया कि रूस के ३८ प्रांतों में एक भी प्रांत ऐसा नहीं बचा कि जहां इस प्रकार के साहित्य के प्रचारक न हों। धीरे-धीरे यह सत्संग शिक्षित आदमियों में साम्यवादी साहित्य के प्रचार करने का केंद्र बन गया। आगे चलकर विद्यार्थियों तथा किसानों और मजदूरों के बीच संबंध स्थापित करने में यह सत्संग बड़ा महायक हुआ। इसी अवसर पर सन् १८७२ ई. में मैं इस सत्संग का सदस्य बना। उन दिनों रूस में तमाम गुप्त समितियां दमन की शिकार बनाई जाती थी। इस ‘आत्म-चरित’ के पाश्चात्य पाठक शायद मुझसे यह आशा करते होंगे कि मैं उन्हें यह बतलाऊं कि इस सत्संग में प्रवेश-संस्कार कराते समय मुझे क्या-क्या रस्में अदा करनी पड़ीं और कौन-कौन शपथें खानी पड़ीं, पर मुझे ऐसे पाठकों को निराशा ही करना पड़ेगा। इस सत्संग के कोई विशेष नियम नहीं थे, सिर्फ एक बात का खयाल रखा जाता था, वह यह कि केवल उन्हीं लोगों को इसका सदस्य बनाया जाय, जिनकी परीक्षा मंडल में की जा चुकी हो और जो कपटों की कमीटी में खरे

उत्तर चुके हों।

“किमी नए सदस्य को शामिल करने के पहले उनके चरित्र की पूर्ण स्पष्टता तथा गंभीरता के साथ आलोचना की जाती थी। स्पष्टता तथा ईमानदारी निहितान्तरियों का विशेष गुण था। यदि किमी आदमी में थोड़ा भी फरेब या अहंकार पाया जाता तो उनका दाखिल होना अनभव था। सत्संगवालों को उस बात की फिक्र नहीं थी कि उनके सदस्यों की संख्या खूब बढ़ जावे। मत्संग यह भी नहीं चाहता था कि देश की भिन्न-भिन्न संस्थाएँ जो काम कर रही हैं, वह सब हमारे द्वारा ही हो। उन वक्त रत्न में जनता की सेवा के लिए कितने ही गिरोह काम कर रहे थे। चेतोवन्की का सत्संग यह नहीं चाहता था कि वे हमारे अधीन होजाय। अधिकांश गिरोहों के साथ सत्संग का मित्रतापूर्ण संबंध था, मत्संग उनकी मदद भी करता था, और वे भी मत्संग की मदद करते थे, पर एक-दूसरे की स्वाधीनता में कोई बाधा नहीं पहुँचाता था।

“इस प्रकार हमारा मत्संग थोटे-मे मित्रों का दृढ़ समूह था। जिन पन्द्रह-बीस स्त्री-पुरुषों से मेरा परिचय इस सत्संग में हुआ, वेगैरे नीतिवान् और सच्चरित्र व्यक्त मुझे जीवन में अन्यत्र नहीं मिले।”

क्रांतिकारी लड़कियाँ

उस समय रूस में जो लड़कियाँ देश के उद्धार के लिए कार्य कर रही थीं, उनके चरित्र का वृत्तान्त सचमुच अत्यंत उत्साहप्रद है। प्रिन्स ग्रोपॉटस्किन लिखते हैं—“एक लड़की का नाम था नोफिया पीरोदस्वाया। वह एक अत्यंत उच्च घराने की थी और उनमें अपना वनापटी नाम रख छोटा था। इस लड़की का पिता पहले सेटपीटमंवरंग का मिनिस्टर-मन्त्री रह चुका था। यह लड़की अपनी माता से, जो उसे बहुत प्रेम करती थी, आना ऐन्डर हार्ट-स्कूल में पढ़ने के लिए चली आई थी और इनमें अन्य तीन लड़कियों के साथ आत्म-शिक्षण का एक समूह कायम कर लिया था। इन लड़की के घर पर मेरी तथा मेरे साथियों की मीटिंग हुआ करती थी। वह लड़की जो, पहले सेटपीटमंवरंग के ऊचे-ऊचे भयानों में अन्तर्गत-अन्तर्गत पाठान्त

१९५१

पहने हुए दीख पड़ती थी, अब विल्कुल मजदूर लड़कियों की तरह रहती थी। वह मोटे सूती कपड़े पहनती थी, पुरूपो के-से जूते पहनती थी और जब वह अपने कंधे पर पानी के भरे हुए डोल रखकर लाती थी, तो उसे देखकर यह कोई भी नहीं ताड़ सकता था कि यह किसी उच्च घराने की लड़की है। जब हम लोग किसानों के-से कपड़े और गवारों के-से जूते पहने हुए उसके घर में घुसते और इन जूतों में उसका साफ-सुथरा घर मँला हो जाता तो उसके भोलेभाले निष्कलक चेहरे पर बड़ी कठोरता आ जाती थी और वह हम सबको डांट बतला देती थी। नैतिक दृष्टि से वह बड़ी मंयमशील थी, लेकिन वह उपदेश देनेवाली नहीं थी। जब उसे किसी सदस्य की कोई बात नामुनासिव जचती तो वह बड़ी कठोरता से उसकी ओर दृष्टिपात करती। चरित्र-सवधी मामलों में वह बड़ी कठोर थी। एक आदमी का जिक्र करते हुए उमने कहा था—‘वह तो जनता है।’ जिस समय उसने ये शब्द अपना कार्य करते हुए कहे थे और जिस ढंग से कहे थे, वह अबतक मुझे भली-भाँति स्मरण है और मैं उसे कभी नहीं भूल सकता। उसकी वह मुद्रा मेरी स्मृति में जमकर बैठ गई है। यह लड़की क्रांतिकारी विचारों की थी और यह बड़ी दृढ़प्रतिज्ञ तथा वीरात्मा थी। किसानों और मजदूरों के लिए काम करना ही उसके जीवन का एकमात्र व्यय था। एक दिन उसने मुझसे कहा—‘हमारे समुदाय ने बड़ा जवरदस्त काम उठाया है; इसके पूर्ण करने में दो पीड़िया बीत जायगी, पर यह काम होना जरूर चाहिए और पूरी तीर पन।’ हमारे साथ काम करनेवाली लड़कियों में एक भी ऐसी नहीं थी, जो फाँसी से डरती हो। मौका आने पर सभी फाँसी के तख्ते पर हँसी-नुस्ती के साथ चढ़ मचती थी, पर जिस समय हम लोग मत्वाहित्य के प्रचार में लगे हुए थे, उन समय उनमें से किसीको यह ख्याल भी नहीं था कि फाँसी का मौना भी आयगा। जब आगे चलकर पीरोवस्काया पकड़ी गई और उसको फाँसी का हुक्म हुआ तो उस समय मृत्यु के कुछ घंटे पहले उमने जो चिट्ठी अपनी मना को लिखी थी, वह बड़ी कल्पनाजनक है और उममें एक स्त्री की प्रेममय आत्मा का मन्त्रा स्वल्प प्रनिविष्टित है।”

क्रोपांटकिन ने एक दूसरी लटकी का जिफ़ उगने हुए कहा है—
 “एक दिन रात को हमें अपने कार्यक्रम में सवध रखनेवाली जर्मनी वान
 अपने माय की एक लटकी को बतलानी थी, उगटिग गन के वत में अपने
 एक मित्र के माय बहा गया। आधी गन बीच चुकी थी, पर उम उटती के
 कमरे में दीपक जल रहा था। हम लोग ऊपर गये, देखा तो वह हमारे
 कार्यक्रम की नकल करती हुई पाई गई। मुझे उम वान एक मजाक सूजा।
 मैंने कहा—‘हम लोग तुम्हें बुलाने के लिए आये हैं। वान यह है कि
 किले में हमारा जो माथी कैद है, आज हम छापा मारकर उसे छुड़ाना
 चाहते हैं। उसीके लिए तुम्हारी जरूरत पड़ी है। उमने हमने एक भी
 सवाल नहीं किया। तुरत ही कलम रखकर कुर्मी पर ने उठ बैठे, और
 बोली—‘तो चलो।’ यह शब्द उमने इतनी मन्चाई और भोगिन
 के साथ कहे थे कि उमे मुनकर मुझे अपने मजाक की मूर्खता पर गज्जिन
 होना पडा। जब मैंने उमे बतलाया कि हम लोगों ने तो सिर्फ मजाक दिया
 था तो वह अपनी कुर्मी पर बैठ गई, उसकी आंखों में आगू आगरे और
 निराशापूर्वक उसने कहा—‘क्या मचमुच तुम्हारा यह मजाक ही था ?
 भला ऐसा मजाक क्यों करते हो ?’ उनका यह उत्तर मुनकर मुझे पता लगा
 कि मैंने कैसा निर्दयतापूर्ण कार्य किया है।”

क्रोपांटकिन के इन कथन में ज्ञान होता है कि उन समय गन की
 लडकियों के हृदय में स्वार्थ-त्याग तथा आत्म-वैरिदान के भाव लिए तद-
 तक धर कर गए थे।

क्रोपांटकिन का मित्र-मंडल

अत्याचारी जारमाही के दिनों में प्रिन क्रोपांटकिन तथा उनके
 साथियों को जो महान कष्ट सहने पडे उनकी तथा कर्ती मतोरेण
 है। इन महापुरुषों के जीवन मचमुच उत्साह-प्रद है। क्रोपांटकिन ने अपने
 एक साथी सर्पेंट शार्वचिनकी का हाल इन शब्दों में लिखा है—
 तथा अमेरिका में सर्पेंट शार्वचिनकी स्टैपनिवाय के नाम में प्रसिद्ध है।

हम लोग अपने मित्रमंडल में उन्हें 'बच्चे' के नाम से पुकारा करते थे। अपनी रक्षा के विषय में इतने लापरवाह रहते थे कि इसीके कारण उनका उप-युक्त नाम पड़ गया था। उनकी इस लापरवाही के मूल में उनकी निःशंका निर्भयता थी। डरना तो वह जानते ही न थे, और पुलिस जिस आदमी का पीछा कर रही हो उसके लिए सर्वोत्तम नीति भी प्रायः यही है कि वह बिल्कुल निडर बना रहे। किसानों तथा मजदूरों में हमारे इस मित्र ने बड़ा जबरदस्त प्रचार-कार्य किया था, और इसीलिए पुलिस भी इनकी तलाश में रहती थी, पर सघेई ने कभी इसकी परवाह नहीं की, और न कभी अपने को छिपाने का कुछ प्रयत्न ही किया। एक बार तो उनकी इस उद्वृण्ड लापरवाही के लिए हमारे मित्र-मंडल ने उन्हें खासी डांट बतलाई थी। बात यह थी कि उस स्थान से, जहाँ हम लोगों की मीटिंग हुआ करती थी, सघेई की जगह दूर थी, और वह वहाँ अक्सर देरी से पहुँचते थे। किसानों की तरह भेड़ की खाल ओढ़े हुए वह सदर सड़क के बीचो-बीच दनादन भागे आते थे। हम लोगों ने उन्हें फटकार बतलाते हुए कहा—'तुम भी बड़े अजीब आदमी हो! भला ऐसी बेवकूफी क्यों करते हो? मान लो, तुम्हें इस तरह भागते हुए देखकर किसी पुलिसवाले के दिल में शंका पैदा हो जाती और वह तुम्हें चोर समझ के पकड़ लेता तो?' पर मित्रवर सघेई अपने विषय में जितने ही लापरवाह थे, दूसरों के विषय में वह उतने ही अधिक सावधान और चिन्ताशील थे। क्या मजाल कि उनकी जवान से कोई ऐसी बात निकल जाय, जिससे भेद खुल जाय और दूसरे आफत में जा फँसें! क्या ही अच्छा होता, यदि हम लोगों में से प्रत्येक आदमी दूसरों की रक्षा के विषय में उतना ही सावधान रहता, जितना मित्रवर सघेई थे। मेरी उनकी घनिष्ठ मित्रता कैसे हुई, यह भी मुन लीजिए। एक दिन रात के बारह बजे तक हमारे मंडल में बातचीत होनी रही। मीटिंग खतम करके जब हम लोग जानेवाले थे, उम समय एक लड़की ने आकर कहा—'मेरे पास एक अंग्रेजी किताब है, सबेरे तक इसके १६ पृष्ठों का अनुवाद हो जाना चाहिए। आठ बजे मुझे अनुवाद तैयार मिले। बोलिए, आप लोगों में से यह कार्य

कौन कर सकेगा ?" मैंने किताब का आकार देखा, और कहा— 'जगर मुझे कोई सहायक मिल जाय तो मैं रात-भर में ही माग वाम कर सकता हूँ।' सर्घेई ने कहा— 'मैं तैयार हूँ।' वन, हम दोनों जुटकर बैठ गए, और चार बजे ही १६ पृष्ठों का अनुवाद खतम कर डाला। फिर मृग अंग्रेजी में हमने अपने अनुवादों को मिलाकर दुहराया। उनके बाद एक थालभर के दानिया हम लोग हज्म कर गए, जो मेज पर हम दोनों के लिए पुस्तकालय-वर्ग में दिया गया था। इस प्रकार कार्य समाप्त कर हम दोनों घर लौटे। उसी रात से हम दोनों में घनिष्ठ मित्रता होगई। ऐसे आदर्शियों को मैं हमेशा पसंद करता रहा हूँ, जिनमें कार्य करने की प्रवृत्ति शक्ति हो और जो अपना काम मन लगाकर अच्छी तरह करे। सर्घेई के अनुवाद ने और शीघ्रनापूर्वक कार्य करने की प्रवृत्ति ने मुझपर अच्छा प्रभाव डाला था और ज्यों-ज्यों मेरी उनकी घनिष्ठता बढ़ती गई, मेरे हृदय में उनके प्रति सम्मान भी बढ़ता गया। वह ईमानदार थे, स्पष्टवक्ता थे, उनमें युवकों-जैसा उत्साह या सुलझी हुई तवीयत के थे, तथा बुद्धिमत्ता भी उनमें उच्चकोटि की थी। उनके इन गुणों ने और उनकी सादगी, सच्चाई, हिम्मत और गहन ने मुझे मुग्ध कर लिया। उन्होंने बहुत-कुछ पढ़ा था और विचार भी काफी किया था। क्रांतिकारी सश्रम के विषय में, जो हम लोगों ने छेड़ रखा था, हम दोनों के विचार बहुत-कुछ मिलते-जुलते थे। वह मुझसे उम्र में दस वर्ष छोटे थे और शायद उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं था कि आगे चलकर क्रांति कैसा भयंकर रूप धारण करेगी और भावी सश्रम हम लोगों के लिए कैसा कठिन सिद्ध होगा। बहुत दिनों बाद उन्होंने मुझे बताया कि बिगानों में वह किस ढंग से प्रचार करते थे—'एक दिन मैं अपने एक मित्र के साथ सड़क पर जा रहा था कि इतने में एक विमान उस तरफ आ निकला। वह गाड़ी पर बैठा हुआ था, जिसमें एक घोड़ा चला हुआ था। मैंने उस विमान में कहना शुरू किया कि तुम टैंक्स मत दो; सरकारों अपना तो साम्राज्य जनता को लूटते हैं। चाइविल में मैंने कई घंटों तक उभरे पर साम्राज्य शुरू किया कि विद्रोह करना तुम्हारा गर्ज्य है। विमान पूरा पदर में

और उसने अपने घोड़े में एक चावुक जमाया । हम लोग भी उसके पीछे-पीछे भागे । फिर उसने घोड़े को दुलकी चाल चलाना शुरू किया, वस हम लोग भी उसके पीछे उसी चाल से चलने लगे । गरज यह कि उसे टैक्स न देने और विद्रोह करने का उपदेश देना मैंने बंद न किया । आखिरकार इस उपदेश में तंग आकर उसने घोड़े को सरपट दीड़ाया, पर बेचारा घोड़ा कमजोर था । घोड़ा क्या था एक किसानू टट्ट, जिसे पेट-भर खाना नहीं मिलता था, इसलिए बहुत तेजी से दौड़ न सका । इस कारण हम लोगो ने उसे जल्दी ही पकड़ लिया । मतलब यह कि भागते-भागते जबतक हमारी मास न फूली, तबतक हम अपना प्रचार-कार्य करते ही रहे ।'

पत्र-व्यवहार का अजीब तरीका

आपन में किस प्रकार पत्र-व्यवहार करते थे उसके बारे में क्रोमॉटकिन लिखते हैं :

“कुछ दिनों के लिए मर्घेई को एक दूसरे प्रात में जाना पडा । आपस में पत्र-व्यवहार की आवश्यकता हुई । यदि सब बातें साफ-साफ लिखते, तब तो पुलिम फौरन ही पकड़ लेती । भिन्न-भिन्न बातों के चिह्न बनाकर लिखना मर्घेई को बहुत नापसंद था, इसलिए मैंने उनसे कहा कि अच्छा एक तरकीब करे । चिट्ठी इस प्रकार लिखी जाय कि प्रत्येक पाचवा या और किसी नंबर का अक्षर सार्थक हो और उन अक्षरों के मिलाने में पूरे वाक्य बन जायं, जिसमें हमारा मतलब पूरा हो जाय । इस प्रकार की लेखन-प्रणाली पहले भी पद्यत्रों में काम में लाई जा चुकी थी ।”

चिट्ठी इस प्रकार लिखी जाती थी :

‘Excuse my hurried letter. Come to-night to see me ; to-morrow I shall go away to my sister. My brother Nicholas is worse ; it was late to perform an operation.’

अर्थात्—'माफ कीजिए, जल्दी में हूँ। आइए मुझमें रात को ही मिलिए। कल वहन के यहाँ खाना हो जाऊगा। निकोलस को नयीया और बदतर है। यहाँ आपरेशन हुआ लेकिन काफी देर में।'

इस पत्र में प्रत्येक पाचवा शब्द ही सार्थक है, दोष बाने योंही लिख दी गई है। पाचवे शब्द मिलाकर पढ़ने से यह वाक्य बनता है—'Come to-morrow to Nicholas late.' अर्थात्—'जाऊँ, पर निकोलस के यहाँ देर में।'

इस ढंग में चिट्ठी लिखना आसान काम न था। प्रोफ़ॉटकिन लिखते हैं।

"इस प्रणाली में लिखने में परिश्रम काफी पड़ता था। जो दान देने मामूली तीर पर एक पृष्ठ में लिखी जा सकती थी, उनके लिए उसे दान-पाच और मात-मात पत्रे लिखने पड़ते थे। इनके साथ ही आठ भाँ काफ़ी लगानी पड़ती थी। अनेक बातों की कल्पना करनी पड़ती थी, जिनमें वे शब्द, जिनकी हमें आवश्यकता थी, यथाम्यान चिट्ठाएँ जा सकते। नर्वेडों को पत्र-व्यवहार का यह ढंग बहुत पसंद आया। उनमें ऐसे ऐसी चिट्ठियाँ भेजना शुरू किया, जिनमें बड़ी मनोरंजक कहानियाँ रखी थी और जिनका अंत नाटकों की तरह अत्यंत आश्चर्यमय होना था।"

"सर्वेडों ने एक बार मुझसे कहा था कि उन प्रान्तों के पद-अभ्यन्तार के कारण मेरी साहित्यिक प्रतिभा जागृत होगी। अगर जिनमें प्रतिभा हो, तब तो प्रत्येक बात उनके विकास में सहायक ही होती है।"

गामों में क्रांति का प्रचार

"१८७४ की जनवरी या फरवरी में जब मैं गामों में था एक आदमी ने मुझमें आकर कहा कि आपमें एक विमान भिजना चाहता है। बाहर जाकर देखा, तो मित्रवर सर्वेडों दिखमान थे। उन्हें बुलाने के लिए पत्र लिखा था, पर वह उसे चान्ना देकर भाग आये थे। गामों में वह खूब हूँट-पूँट थे और उनके साथ रोगवाफ़ नामक एक मित्र भी था। पर भी काफी तावतवर था। गावों में वे दोनों चले गये।"

करते हुए घूमते थे, और क्रांति का संदेश ग्रामीण जनता तक पहुंचाते थे। लकड़ी चीरने का काम काफी कठिन था, और उनके हाथ इसके लिए अभ्यस्त भी नहीं थे, पर वे दोनों इस काम को खूब पसंद करते थे। इन दोनों को देखकर कोई भी यह नहीं ताड़ सकता था कि ये लकड़ी चीरने-वाले दरअसल कौन हैं। पंद्रह दिन तक तो बिल्कुल बे-खटके वे दोनों क्रांतिकारी प्रोपेगंडा करते रहे, और किसीको इस बात का शक भी नहीं हुआ कि आखिर ये हैं कौन? कभी तो सर्वेडॉ वाइविल से, जो उसे कण्ठस्थ थी, कुछ वाक्य कहकर ग्रामवासियों को यह धार्मिक उपदेश देता कि क्रांति करना तुम्हारा कर्तव्य है और कभी वह अर्थशास्त्र की बातें समझाकर उन्हें गदर करने की सलाह देता। उन दोनों उपदेकों को ग्राम्य जनता ने ईश्वर-प्रेरित धर्म-दूत समझा। किमान लोग बड़े ध्यान में उनकी बातें सुनते थे। उन्हें घर-घर लिये फिरते थे और उनसे भोजन के दाम भी नहीं लेते थे। कोई पंद्रह दिनों में ही उन दोनों लकड़ी चीरनेवालों ने आस-पाम के दस-तीस ग्रामों में खामी हलचल पैदा कर दी। उनकी कीर्ति भी चारों ओर फैलने लगी। किमान लोग—युवक और वृद्ध—खेत और खलिहान पर आपस में काना-फूमी करने लगे—“अरे भाई, ये तो ‘दूत’ आ गए मालूम होते हैं।” फिर कहते, “अब क्या है, जमींदारों से जमीन छीन ली जायगी। ज़ार उन्हें पेंशन दे देंगे।” किसान नवयुवक जग और भी जोश में भर गए और सरकारी पुलिस के मिपाहियों के सामने अकड़-अकड़कर कहने लगे—“बच्चा, ठहरो ज़रा। अबकी हमारी पारी है। तुम राक्षसों के शासन का अब अंत आ चुका है।”

आखिर उन लकड़ी चीरनेवालों की कीर्ति-कथा एक पुलिस के अधिकारी के कानों तक पहुंची। उसने उन दोनों को गिरफ्तार कर लिया। कितने ही किमानों को गार्ड बनाकर पुलिसवाले उन्हें हेडक्वार्टर की तरफ ले चले। रास्ते में एक गांव पड़ा। वहां एक उत्सव मनाया जा रहा था और ग्राम्य जनता खाने-पीने में मस्त थी। ज्योंही ये लोग पहुंचे कि किमानों ने कहा—“कौड़ी लोग हैं? बहुत बदन पर आये। आओ, चाचा!” किसान

उन सबको अपने घर ले गए और घर की बनी शराब उटकर निकाली। पुलिस के गादों में भी शराब पीने के लिए बहा गया, वे तो पकड़े में ही तैयार बैठे थे। उन्होंने खूद तो पी ही, साथ ही यह भी कहा कि उन कैदियों को भी पिलाओ। मर्घेई को भी पीने के लिए बहा गया, पर बर्तन इतना बड़ा था कि मर्घेई ने बर्तन मुह में लगाकर पीने का बहाना तो किया, पर पी बिल्कुल नहीं। पुलिसवालों ने खूब उटकर पी। फिर उन्होंने सोचा कि इस हालत में तो पुलिस के अफसर के पास चगना ठीक नहीं होगा। सवेरा होने पर चलेंगे। मर्घेई उनमें मनोरंजक बातचीत करना गया। सब लोग बड़े खुश हुए, और आपस में कहने लगे—'दिगो, बेचारे बंमो भले आदमी को पुलिस ने पकड़ लिया है।' एक नवयुवक किमान ने उशान किया कि रात के बखत हम दरवाजा खुला छोड़ देंगे। मर्घेई और उशान साथी इस इशारे को समझ गए और जब सब लोग सो गए, वे कमरे में निकल भागे और सवेरे पांच बजते-बजते उस ग्राम में वे बीस मीन आगे निकल गए। वहां में एक छोटे-से रेलवे स्टेशन में वे मान्को के लिए रुकना होगए। मर्घेई ने मान्को में ही अपना अट्टा बना दिया और जब सेंटपीटर्सवर्ग के तमाम कार्यकर्ता पकड़ लिये गए, उस समय मर्घेई का अड्डा आंदोलन का मुख्य केंद्र बन गया।'

जनता में प्रचार-कार्य

त्रोपॉटकिन ने शहरो तथा ग्रामों में प्रातिकारी विचारगण फैलाने-वालो का बड़ा ही सजीव चित्रण किया है। वे लिखते हैं

प्रचारक लोग नाना प्रकार के रूप धारण करते और भिन्न-भिन्न पेशों में काम करने लगे थे। कोई लुहार की दुकान पर काम करना या तो कोई खेत पर और इस प्रकार धनीमानी आदमियों के जवान लगे मान्की-हीन किमानों तथा मजदूरों के मपक में आने लगे थे। मान्को में तो जमान हुआ था कि बमीर घराने की लड़कियों ने, जो ज्यन्त्रिय विद्वन्-विद्वान् में शिक्षा प्राप्त कर चुकी थी, कपाम के वाग्दानों में नौकरी पर ली थीं और

वह चौदह से सोलह घंटे प्रतिदिन कठिन परिश्रम करती थी। यही नहीं, व फॅक्टरियों से मंलग्न छोटी-छोटी गद्दी कोठरियों में रहती थी और मामूली मजदूर औरतो जैसी जिदगी विताती थी। यह एक महान् आंदोलन था, जिसमें कम-से-कम दो-तीन हजार आदमी अपना पूरा-पूरा समय लगाये हुए थे और इनसे दुगुने-तिगुने आदमी भिन्न-भिन्न प्रकार से उन आगे बढ़ कर काम करनेवालों को पीछे से मदद दे रहे थे। सेंटपीटर्सबर्ग में काम करनेवाली मडली इन लोगों में से कम-से-कम आधे आदमियों से सवध बनाये हुए थी। हा, उनसे पत्र-व्यवहार गुप्त अक्षरों द्वारा ही हुआ करता था।

क्रांतिकारी साहित्य

रूस में प्रकाशित होनेवाले साहित्य पर कठोर नियंत्रण था। अपने लेख या पुस्तक में समाजवाद का नाम लेने या उसका जिक्र करने की भी मनाही थी। इसलिए विदेश में अपना प्रेम कायम करने का प्रवध किया गया। किमानों तथा मजदूरों के लिए छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ तैयार करनी थी और उनके लिए हम लोगों ने एक साहित्यिक कमेटी बना दी थी, जिसका मैं भी एक सदस्य था। इस कमेटी के पाम काफी काम था। ये किताबें और पैमफ्लेट विदेश में छपवाई जाती थी और फिर-फिर गोपनीय ढंग से एक जगह पर जमा करके तत्पश्चात् उन्हें भिन्न-भिन्न केंद्रों को भेजना होता था, जहाँ से वे किमानों तथा मजदूरों में बटवाई जाती थी। इसके लिए एक विस्तृत संगठन की जरूरत थी और तदर्थं काफी पत्र-व्यवहार तथा यात्राएँ भी करनी पड़ती थी। पुलिन की निगाह से बचने हुए अपने में सहानुभूति रखनेवाले पुस्तक-विश्रेणाओं तक इन पुस्तकों को पहुँचाना कोई आसान काम नहीं था और इसके लिए गुप्त अक्षरों में काफी पत्र-व्यवहार भी करना पड़ता था। अलग-अलग केंद्रों के लिए अलग-अलग गुप्त अक्षर थे। स्त्रियाँ इस काम में बहुत सहायता देती थीं। इस प्रकार के पत्र-व्यवहार के व्यापक स्वीचने में वे रातों गजार देती थीं।

कार्य करने का ढंग

हम लोगो की सभा-समितियों में सर्वथा भाँचारे का बर्ताव होता था। सभापति, मंत्री इत्यादि की शिष्टाचार युक्त कार्रवाइयाँ हमें मग्न नाकर देती थी। यद्यपि हम लोगो में कभी-कभी बड़ी गरमागरम बहस होती थी, तथापि हम लोग पाश्चात्य देशों के सभा-संचालन के तौर-तरीकों का अध्ययन करने के बिना अपना काम चला लेते थे। हार्दिक मञ्चाई में काम लेना और विद्यार्थस्त विषयों के सर्वोत्तम हल निकाल लेना ही हमें सबका उद्देश्य था। किसी भी प्रकार की कृत्रिम या नाटकीय वातचीत या रंग-रंग में हमें नकरना था। भोजन के लिए हम लोगो को मोटी रोटी, ककड़ी, पनीर और इत्यादि चीजें प्रचुर मात्रा में, वस यही मिल पाता था। पैसों का बिल्कुल ही अभाव था, जो वात नहीं थी। पैसा था, लेकिन हम लोगो के बढ़ते हुए व्ययों को देगने अपर्याप्त था, क्योंकि चीजों के छिपाने में, किताबों के खर-उखर भेजने में, पुस्तक खरीदने में तलाश में थी, ऐसे मित्रों के छिपाने में और नये कार्यक्रमों के प्रारम्भ करने में बहुत पैसा खर्च हो जाता था।

सफेद-पोशों और मजदूरों की मनोवृत्ति

मेरी सहानुभूति खान तौर पर चुनकरो तथा फँटणियों के मजदूरों के साथ थी। सेंटपीटर्सबर्ग में हजारों ही ऐसे मजदूर थे, जो जाजों में गहर में जाते आते थे और गर्मियों में अपने ग्रामों को लौट जाते थे, जहाँ वे अपनी पत्नियों के साथ रहते थे। इन लोगो के बीच में हमारे आदोषन ने एक प्रभाव डाला था। वे लोग दिन-दम, बारह-बारह मिलाकर एक कामना सिखाते थे और वे लेते थे और उसीमें रहते थे। इन्हीं कमरों पर पहुँचकर हम लोग अपना प्रचार-कार्य करते थे। इन्हें हम लिखना-पढ़ना भी सिखाते थे और तत्पश्चात् उन्हें अपने मित्रों के साथ बतलाते थे। इन लोगो के पान जाने के लिए हमें विद्यार्थियों में गते पानने पड़ते थे, क्योंकि जेण्टिलमैनो की पोशाक में उन लोगो के पान जाना सभ्य में खाली नहीं था, उनमें पुस्तक को फॉरन शब्द पैदा हो जाता। कभी-कभी ऐसा होता कि मैं जार के महलों में, जहाँ मुझे एक मित्र के सिने जाने पानना पड़ा था।

लौटकर अपनी शिप्ट-मडली की पोशाक उतारता और किसानों-जैसे कपड़े पहनकर इन लोगों के पास गंदी बस्तियों में जाता। जब मैं उन्हें बतलाता कि विदेशों के मजदूर अपना सगठन कैसे करते हैं तो वे मेरी बातों को बड़े ध्यानपूर्वक सुनते और फिर अंत में कहते—हम लोगों को रूस में क्या करना चाहिए ? “आप लोग अपना सगठन करके आंदोलन कीजिए। इसके सिवा दूसरा कोई तरीका नहीं।” फ्रांसीसी क्रांति के विषय में हम लोग उन्हें पम्फलेट दे देते और हमारा यही संदेश होता, “दूसरों तक हमारी बात पहुंचाइए और जब हमारे-जैसे विचारों के आदमियों की तादाद ज्यादा हो जायगी तब कोई दूसरा कार्यक्रम सोचेंगे।” वे मजदूर हमारी बातों को भली-भांति समझ लेते थे। यही नहीं, वे इतने उत्साहित हो जाते थे कि उनके जोश को नियंत्रित करने की जरूरत पड़ जाती थी।

सन् १८७४ की पहली जनवरी का दिन मुझे खास तौर पर याद आता है। उसके पहले की रात मुझे सुशिक्षित मडली में गुजारनी पड़ी थी। इन सुशिक्षित सफेदपोंगों ने नागरिकों के कर्तव्य, देशहित इत्यादि के विषय में बड़ी लंबी चौड़ी बातें हांकी थी, लेकिन इन सब स्फूर्तिप्रद व्याख्यानो के पीछे एक भावना छिपी हुई थी, वह यह कि अपना हाथ-पैर बचाकर मूर्खों को कैसे टरकाया जाय ! अपने निजी स्वार्थ की रक्षा ही इन लोगों का मुख्य उद्देश्य था, लेकिन किसीमें भी इतना साहस नहीं था कि खुलकर इस बात को स्वीकार कर लें कि हम उसी सीमा तक काम कर सकते हैं, जिस हद तक स्वयं हमारा जीवन संकट में न पड़े। नीच जाति के आदमी बड़े आलसी हैं, विकास तो धीरे-धीरे ही होता है, निरर्थक बलिदान से क्या फायदा, वैसे हम तो त्याग करने के लिए उद्यत हैं, इत्यादि दंभपूर्ण बातें सुनकर मेरे हृदय को बड़ा दुःख हुआ। दूसरे दिन सवेरे मैं जुलाहों की मीटिंग में गया, मेरी पोशाक किसानों-जैसी ही थी, इसलिए उममें शामिल होने में कोई दिक्कत नहीं हुई। मेरे साथी ने मेरा परिचय कराने हुए निर्फ इतना ही कहा—“ये बोरोडिन है—अपने मित्र।” तब उन जुलाहों ने पूछा—“भई बोरोडिन ! अपने विदेश-यात्रा के अनुभव हमें सुनाइये।” फिर मैंने उन्हें पाश्चात्य देशों के मजदूर-सगठन, उनके मकर्थ,

कठिनाई, आधा और निराशा के किस्मे मुना दिये। वट्टी दिल्लीवालों ने उन्हें सारी बातें सुनी। श्रमजीवी मधो के विषय में मवाला किये और अन्तर्गर्तीय मध के उद्देश्यों के विषय में भी पूछताछ की। तत्पश्चात् मुख्य मवाला यह था—
 “रूस में यदि हम लोग वैसा संगठन करें तो कहानक सफलता मिलेगी ?”
 मैंने उनसे साफ तौर पर कह दिया, “इस प्रकार के आंदोलन करने में ग्याही न होंगे। नतीजा यह हो सकता है कि हम लोगों को देश-निवाले का टुकड़ा दिया जाय और हम माइवेरिया भेज दिये जाय और शायद आप लोगों को महीनों के लिए जेलखाने की हवा खानी पड़ेगी, इस उपगम में कि आपने हम लोगों की बातें सुनी।”

मेरी इन बातों से वे तनिक भी भयभीत न हुए। बोले—“जागिर गाद-वेरिया में सिर्फ रीछ ही नहीं रहते, आदमी भी रहते हैं। जहाँ कुछ आदमी न रह सकते हैं, वहाँ दूसरे भी रह सकते हैं। अगर आप भेटियों ने उन्हें है तो जगत् में जाने का खयाल ही छोड़ दीजिए, इत्यादि।

और भविष्य में जब मकट का वक्त आया और इन जुलाहों में से दान से पकड़े गये, तो करीब-करीब सभीने वट्टी बहादुरी में काम लिया। उन्होंने हमारी रक्षा की और किमीने भी विस्वामघात नहीं किया।

मेरी गिरफ्तारी

अगले दो वर्षों में काफी धर-पकड़ हुई—राजधानी में और प्रांतों में भी। हर महीने हमें इस प्रकार के दुःखप्रद समाचार मिलते थे कि आज अंग्रेज साथी पकड़ा गया तो कल दूसरा। सन् १८७४ के अंत में इन प्रांतों की गिरफ्तारियों की मस्या और भी बढ़ गई। पुलिन ने गैटपीटमंदरों के ताने अड़्डे पर छापा मारा और कई व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया। पुलिन बड़ी सतर्क होगई। अगर कोई विद्यार्थी मजदूरों की दम्नियों में चपला गया हुआ दीख पड़ता तो वह फौरन पुलिन की निगाह में चर जाता। तभी मर्गों के अनेक व्यक्ति पकड़ लिये गए और सिर्फ ५-६ आदमी ही बच गये। कुछ दिनों बाद मैंने सुना कि दो जुलाहे पकड़े गये हैं। वे मंडला अविश्वामघात में,

पर वे मुझे जानते थे—मेरे गुप्त नाम वीरोडिन से भी वाकिफ थे। एक सप्ताह के भीतर मुझे और मेरे एक मित्र को छोड़कर सब पकड़ लिये गए। हम लोगो के पास सेंटपीटर्सबर्ग को छोड़कर भाग जाने के सिवा और कोई चारा न था। पर यह काम हम करना नहीं चाहते थे। हमारा काम काफी फैला हुआ था। विदेशो में पेम्फलेटो की छपाई होती थी, चोरी-चोरी उन्हें रूस में लाया जाता था, कितने ही केंद्रों तथा क्षेत्रों पर उन्हें वितरित किया जाता था। चालीस प्रांतों में हमारा जाल फैला हुआ था और इस सगठन में हमारे दो वर्ष लग गये थे। इनके सिवा खुद सेंटपीटर्सबर्ग में मजदूरों के बीच काम करनेवाले हमारे चार केंद्र थे और उनमें छोटे-मोटे अनेक कार्यकर्त्ता थे। इन सबको मॉस्को में छोड़कर कैसे भागा जा सकता था, जबतक कि इनसे पत्रव्यवहार करने और सबव्यवसाय रखने का कोई इतजाम न कर लिया जाता। हम लोगो ने दो नये मेबर अपनी मडली में शामिल किये और उन्हें सारा काम समझाना शुरू कर दिया। सर्व कौफ ने अपना कमरा छोड़ दिया और वह अपने मित्रों के यहाँ रहने लगे—कभी किसीके तो कभी किसीके। मुझे भी अपना मकान छोड़ देना चाहिए था, पर मेरे मामले एक मुश्किल थी—वह यह कि मैंने फिनलैंड तथा रूस के एक भौगोलिक विषय पर अपनी रिपोर्ट तैयार की थी और उसे भूगोल-समिति के सामने पेश करना था। उन्ही कारण मुझे एक सप्ताह के लिए रुक जाना पड़ा। इस बीच अनेक अजनबी आदमी वहाने डूढ़-टूढ़कर मेरे मकान के आसपास चक्कर लगाते रहे। इस बीच एक दिन एक जुलाहा जो पकड़ा गया था, मुझे अपनी गली में दीख पड़ा, जिससे मैं समझ गया कि मेरे मकान पर पुलिस की निगाह है। पर मैं बिना उद्विग्न हुए यह सब देखता-मुनता रहा, क्योंकि मुझे अगले शुक्रवार को भूगोल-समिति के सामने अपनी रिपोर्ट पेश करनी थी।

मीटिंग हुई और उनमें काफी उत्साह प्रदर्शित किया गया। मेरे निदात की पुष्टि होगी और मीटिंग में यह प्रस्ताव रखा गया कि फिजीकल ज्याग्राफी विभाग का प्रधान मुझे बना दिया जाय। वहाँ जब प्रधान बनाने की बात हो

रही थी, मैं मन-ही-मन यह सोच रहा था कि आज अपने घर पर सौऊगा या खुफिया पुलिस के जेलखाने में। बेहतर होता, अगर मैं उस गाम को घर न लौटता। पर मैं पिछले कुछ दिनों के परिश्रम से इतना थक चुका था कि मैंने घर ही जाने की बात सोची। उस रात को पुलिस ने छापा नहीं मारा। उस रात को मैंने वे सारे कागज-पत्र, जिनसे किसीको भी खतरा हो सकता था, जला डाले। अपना वोरिया-विस्तर बाघ लिया और चलने की तैयारी करने लगा। मैंने सोचा कि झुटपुटे के बक्ल निकल भागूंगा। ज्योंही कुछ अँधेरा बढा, मरी नौकरानी ने कहा—“आप दूसरे जीने से बाहर जाइए।” मैं समझ गया कि क्या मामला है। जीने से उतरकर मैं घोडागाडी में बैठ गया और गाड़ी हंकवा दी। पहले तो मैंने समझा कि जान बची, पर थोडी देर में देखता क्या हूँ कि एक तेज गाटी मेरा पीछा कर रही है। हमारी गाडी का घोडा कुछ अटका ही था कि वह गाडी हमसे आगे निकल गई। उस गाड़ी में मैंने उस जुलाहे की शकल देखी और उसके साथ कोई दूसरा आदमी भी बैठा देखा। उस जुलाहे ने मेरा नाम वीरोडिन लेकर हाथ का इगारा किया। मैंने सोचा कि शायद यह छूट गया है और मुझे कुछ सूचना देना चाहता है। ज्योंही हमारी गाड़ी रुकी, जुलाहे के उस साथी ने जो खुफिया पुलिस का आदमी था, जोर से चिल्लाकर कहा—“मिस्टर वीरोडिन, प्रिंस क्रोपॉटकिन, मैं तुम्हे गिरफ्तार करता हूँ।” पुलिसवालो को उसने पहले से इशारे से बुला लिया था। निकल भागना बगभव था। उस खुफिया पुलिसवाले ने मुझे एक कागज दिखलाया, जिस-पर पुलिस की मुहर थी। उसने मुझसे कहा, “आपको अपनी सफाई देने गवनर जनरल के यहा चलना है।”

मैं समझ गया कि अबतक इन लोगो को मेरे बारे में कुछ शक था कि वीरोडिन मैं ही हूँ, पर जुलाहे की बात पर मेरे ध्यान देने के कारण उनका यह भ्रम दूर होगया। ये लोग मुझे खुफिया पुलिस के हेडक्वार्टर पर ले गये।

इसके बाद क्रोपॉटकिन ने खुफिया विभाग की जिरह का मनोरजक वर्णन किया है, जिसे हम बिस्तार-भय के कारण नहीं दे सकते।

पीटर के दुर्ग में

क्रोपॉटकिन उस वदनाम पीटर के किले में रक़्ते गये, जहा रूस के कितने ही प्रसिद्ध-प्रसिद्ध व्यक्ति पहले रक़्ते जा चुके थे। यह वही किला था, जिसका नाम रूस में दवी जवान से लिया जाता था। इसी किले में प्रथम पीटर ने अपने लड़के की हत्या की थी। इसीमें रानी तारकेनोवा एक गफा में वद रखी गई थी, जिसमें नदी में पानी आ जाने के कारण पानी भर गया था। इसी दुर्ग में द्वितीय कैथेराइन ने वीनियो आदमियो को मरवा डाला था। गरज यह कि पिछले एक सौ सत्तर वर्षों में यह किला अपने घोर अत्याचारों के लिए रूसभर में वदनाम हो चुका था। न जाने कितने व्यक्तियों का यहा वध किया गया, कितनों पर शारीरिक जुल्म, कितने ही धीरे-धीरे मौत के घाट उतरे और कितने ही उन अंधकारमय नम कोठरियों में पागल होगये। इसी किले में रूस में प्रजातंत्र का झंडा सर्व-प्रथम फहराने वाले डिसेम्ब्रिस्ट लोग बंद रहे थे, इसीमें कवि राइलीफ, शैवलैको, डोस्टोवस्की, वाकूनिन, चर्नोशिवस्की, पिसारैफ तथा रूस के अनेक महान लेखकों को जेलखाने का दंड दिया गया था। यही काराकोजोफ को फासी दी गई थी।

क्रोपॉटकिन ने आत्मचरित में लिखा है—“इसी किले में नैचेफ, जिसे स्विटजरलैण्ड ने रूस को सौंप दिया था, वद है और उसका कभी छुटकारा न होगा। जार के द्वारा किसी अज्ञात अपराध के लिए दो आदमी और भी इसी किले में बंद हैं और ज़िदगी भर यही रहेंगे, याद उनका यही अपराध है कि जार के महलों की किसी गोपनीय बात का उन्हें पता है। इन सब दुर्घटनाओं की छाया मेरी कल्पना दृष्टि के सामने घूमने लगी, पर त्रास तीर पर ब्याल आया मुझे वाकूनिन का, जिन्हें मन् १८४८ में दो वर्ष के लिए आस्ट्रिया के एक किले में वद कर दिया गया था, यही नहीं, जिन्हें कमर में जज़ीर बांध कर एक दीवार से जकड़ दिया गया था और तत्पश्चात् जार की रानी सरकार को सौंप दिया गया था और जो छ. वर्ष इसी किले में रहे थे, और जो जार की मृत्यु के बाद ही छोड़े गये थे। वाकूनिन जब इस किले

से छूट थे तो वे अपने उन साथियों में, जो बाहर स्वतंत्र रहे थे, जहाँ शक्ति स्वस्थ और शक्तिशाली थे और उनमें कहीं अधिक ताज़गी थी। मैंने मन में कहा—“जब वाकूनिन इस किले में से ज़िदा निकल गये तो मैं भी ज़िदा निकलूंगा, यहाँ मरूंगा नहीं। चांगे तरफ़ मत्नादा था। कोई आवाज़ मुनाई नहीं पड़ती थी। मैं अपने स्टूल को खिचकी के पान नीचे गिरा और उस पर सड़े होकर बाहर दिग्वाई देनेवाले आकाश के छोट्टे-मे टुकटे गो देगले लगा। मैं किसी भी ओर से कोई आवाज़ सुनना चाहता था, पर कहीं से कोई भी ध्वनि नहीं आ रही थी। इस व्यापक मत्नादे में मैं नग आगया और मैंने कुछ गाने की कोशिश की, पहले कुछ धीमे स्वर में, फिर पीछे कुछ जोर में साथ। मेरी कोठरी के छेद में से निपाही ने आवाज़ दी, “श्रीमान, गाना न गाइए” मैंने जवाब दिया, “मैं जरूर गाऊंगा।” निपाही ने कहा, “हर्गिज नहीं।”

मैंने कहा—“तुम चाहे जो कहो, मैं जरूर गाऊंगा।” तब आया मेरा अध्यक्ष आया और उसने मुझसे यही कहा कि अगर तुम गाना गाने लगे तो मुझे किले के शासक से रिपोर्ट करनी पड़ेगी। मैंने उत्तर में कहा—“गाना गला बैठ जायगा और फेफड़े भी खराब हो जायगे, अगर मैं बोलूंगा नहीं और गाऊंगा नहीं।” इसपर जेल के अध्यक्ष ने कहा—“तब जाय दूना पीसिं स्वर में गा सकते हैं—खुद अपने लिए।”

लेकिन यह सब निरर्थक था। कुछ दिनों बाद मेरी गाने की इजाज़त दी जाती रही। सिद्धांत की रक्षा के लिए मैंने गाने के प्रथम दो शब्द गाने का प्रयत्न भी किया, पर वह चल नहीं सका।

मैंने अपने मन में कहा :

“सबसे मुख्य बात यह है कि मैं अपनी शारीरिक शक्ति कायम रखूँगा, मैं बीमार हर्गिज नहीं पड़ूँगा। मैं ऐसी कल्पना करता हूँ कि मुझे उतनी शक्ति की यात्रा करनी पड़ी है और एक झोपड़ी में दो वर्ष बिताने पड़ेंगे। मैं अपनी व्यायाम करूँगा, जमनास्टिक करूँगा और ऐसी कोशिश करूँगा कि मेरी ओर का वातावरण मुझे बीमार न लाल दे। अपनी कोठरी में मैंने से दूसरे कोने तक दस कदम होते हैं, अगर मैं उस दो बार एक-दो-बार एक

तो दो तिहाई मील का टहलना हो ही जायगा। इस ढग से मैं पांच मील रोज टहलूंगा। दो मील भोजन के पहले, दो वाद को और एक सोने के पूर्व।

मैंने दवात, कलम और कागज के लिए प्रार्थना की, पर वह अस्वीकृत कर दी गई। इस किले में बंद जेलियों को कलम-दावात तभी मिल सकती थी, जब स्वयं रुसी सभ्राट जार से उसके लिए आज्ञा ले ली जाय। पर मेरे भाई अलेक्जेंडर ने मेरे लिए कलम दावात की अनुमति मगा ली थी। एक दिन मुझे एक गाड़ी में विठलाकर खुफिया विभाग के कार्यालय को ले जाया गया, जहां दो पुलिस के अफसरों के सामने मुझे अपने बड़े भाई से मिलना था। जब मैं पकड़ा गया, उस समय मेरे बड़े भाई ज्यूरिच में थे। अपने जीवन के आरंभ से ही एलेक्जेंडर की इच्छा विदेश जाने की रही थी, जहां कि आदमी स्वाधीनता-पूर्वक विचार कर सकते हैं, मनचाही किताबें पढ़ सकते हैं और स्वतंत्रता के साथ अपनी सम्मति भी प्रकट कर सकते हैं। रुस के दमघोटू वातावरण से उसे नफरत थी। सच्चाई—वाचन तोले पाव रती सच्चाई और हृदय दर्जों की स्पष्टवादिता, ये मेरे बड़े भाई के गुण थे। वह किसी भी शकल में घोसा या व्यर्याभिमान को बिल्कुल सहन नहीं कर सकता था। रुस में लिखने बोलने की स्वाधीनता का अभाव था और साधारण जनता जुल्म के सामने सिर झुका देती थी और रुसी लेखक दबी जुवान से लिखने के अम्यस्त हो चुके थे। ये सब बातें मेरे बड़े भाई के स्वभाव के सर्वथा विपरीत थी। इसलिए उन्होंने स्विटजरलैंड जाने का निश्चय कर लिया था। इसके सिवा उनके दो बच्चे सैण्टपीटर्स बर्ग में मर चुके थे। एक तो कुछ ही घंटे में हैज से और दूसरा क्षय रोग से। इसलिए राजधानी में रहना भी उसे नापसंद था। मेरे भाई ने हम लोगों के आदोलन में हिस्सा नहीं लिया था और जनता द्वारा विद्रोह की भावना में उनका विश्वास भी नहीं था। . . . वे स्विटजरलैंड के ज्यूरिच नगर में बन गये थे, पर जब उन्होंने मेरे पकड़े जाने की खबर सुनी तो वे अपना सब काम छोड़कर सेंट पीटर्सबर्ग चले आये। बातचीत के समय हम दोनों ही काफी उत्तेजित थे, मेरे भाई तो और भी ज्यादा। पुलिसवालों की बर्दी में ही उन्हें नफरत थी—रुस में स्वाधीन विचारों का गला घोटनेवाले पुलिसवालों से—

और उनकी मौजूदगी में वे अपनी यह सम्मति प्रकट भी कर देने थे। उनके रस में वापस आने से मेरे हृदय में नाना प्रकार की शकाएँ उठ खड़ी हुई थीं। उनके ईमानदार चेहरे और प्रेम-पूर्ण नेत्रों को देखकर मुझे हर्ष हुआ था और यह जानकर खुशी हुई थी कि वे मुझसे महीने में एक बार मिल सकेंगे, पर मेरी हार्दिक इच्छा यही थी कि वे इस जगह से मकड़ों की तरह दूर रहें। मुझे यह आशंका थी कि कभी-न-कभी वे भी पुलिस की निगरानी में इसी जेलखाने में लाये जायेंगे। मेरी अंतरात्मा कह रही थी—“अरे! शेर की माँ ने क्यों चले आये? जल्दी-से-जल्दी इस देश को छोड़ जाओ।” पर मैं जानता था कि जबतक मैं जेल में हूँ, तबतक मेरा बड़ा भाई रस छोड़ेगा नहीं।

मेरे बड़े भाई जानते थे कि कुछ काम न कर सकने के मानी होंगे मेरी मौत। इसलिए उसने पहले से ही अर्जी भेज रखी थी कि मुझे कलम, दवा, कागज मिल जाय। भूगोल-समिति चाहती थी कि मैं अपनी किताब को सम्पादन कर दूँ। मेरे भाई ने विज्ञान-समिति को भी इस मामले में दिलचस्पी लेने का अनुरोध किया। मेरे जेल में दो-तीन महीने रहने के बाद एक दिन जेल के शासक ने आकर मुझे हुकम सुनाया कि मन्त्रालय ने मुझे अनुमति प्रदान कर दी है कि शाम तक मैं लिखने का काम कर सकता हूँ।

भाई की गिरफ्तारी

सबसे अधिक कष्टप्रद चीज थी चारों ओर का सन्नाटा।—यदिमान-जैसी शांति—जिसे तोड़ना असंभव था। बात बरने के लिए कोई आरम्भ नहीं था। एक महीना गुजरा, दो गुजरे, तीन गुजरे, महात्मा कि पन्ना भाई इसी सन्नाटे में गुजर गये। जेल का अध्यक्ष सबने आता था। वह निरर्थक ही पूछता—“तमाखू या कागज तो नहीं चाहिए?” मैं उनके दाँतों में गन्धों की कोशिश करता, पर वह चुप रह जाता। वह ऊपर-ऊपर निगाहें डालता मानो मुझसे यह कहना चाहता था कि “मेरे ऊपर भी निगाहें डालो जा नहीं है।” केवल कबूतर ही ऐसे जीव थे, जो मुझसे बातचीत करने में नहीं डरते थे। वे सबेरे और शाम को मेरी खिड़की पर आकर मेरे हाथ में आता था

जाते थे । जाड़े के दिनों में मेरे कमरे में इतनी नमी होगई कि मुझे गठिया की बीमारी होगई । फिर भी मैं प्रसन्न था, क्योंकि मैं लिखने-पढ़ने का काम कर सकता था । पांच मील रोज टहलने का अपना नियम मैंने बराबर जारी रखा था, पर कुछ दिनों बाद मेरी कोठरी पर दुबल की घटा छा गई । मेरे बड़े भाई को गिरफ्तार कर लिया गया । मेरी अंतिम मुलाकात उनके साथ दिसंबर १८७४ में हुई थी । वे और मेरी बहन हँलेनी मुझसे मिलने आये थे । पुलिस का अफसर मौजूद था । बहुत दिनों के बाद जब जेल में अपने सगे-संबंधियों से मिलना होता है तो कैदी तथा उसके रिश्तेदार दोनों ही उत्तेजित हो जाते हैं । अपने प्रेमियों को इतने निकट पाकर और उनकी चिर-परिचित आवाज को सुनकर बड़ा आनंद होता है । पर साथ-ही-साथ यह अनुभूति भी कि यह मिलन क्षण स्थायी है । खुफिया पुलिस के सामने कोई निजी बातचीत तो हो ही नहीं पाती । मेरे भाई और बहन दोनों ही मेरी तदुस्ती के बारे में बहुत चिंतित थे, क्योंकि जाड़े का असर मेरे स्वास्थ्य पर स्पष्टतया दीख पड़ने लगा था ।

इस बातचीत के एक सप्ताह बाद पोलाकौफ का एक पत्र मेरे पास आया कि भविष्य में वे मेरी किताब के प्रूफ देखा करेंगे । मैं तो बड़े भाई से पत्र की आशा कर रहा था । मुझे शक होगया कि शायद मेरा भाई पकड़ा गया होगा । मेरे-जैसे अविवाहित आदमी के लिए गिरफ्तारी तो एक व्यक्तिगत कठिनाई और तकलीफ थी, पर मेरा भाई तो विवाहित था, उसे अपनी पत्नी में बहुत प्रेम था और अपने बच्चे पर भी वे दोनों बहुत मुहूर्वत रखते थे, क्योंकि उनके पहले दो बच्चे मर चुके थे । मेरी चिंता का क्या पूछना ! मैं सोचता था कि आगिर मेरे बड़े भाई को क्या पकड़ा गया ! उसने क्या जुर्म किया होगा ? सप्ताह के बाद सप्ताह बीत गये, पर मुझे कोई भी खबर नहीं मिली । बहुत दिनों पीछे मालूम हुआ कि उसे लंदन के एक पत्र फोग्वार्ड को एक चिट्ठी भेजने के अपराध में गिरफ्तार किया गया था । लैबराफ नामक एक रूसी मजदूर लंदन में इस समाजवादी पत्र के सम्पादक थे और मेरे बड़े भाई ने उन्हें एक रूसी भेजा था, जो बीच में ही पकड़ लिया गया । मेरे भाई ने

उस पत्र में मेरे स्वास्थ्य के विषय में लिखा था, बहुत-सी गिरफ्तारियों की चर्चा की थी और इसी सरकार के जालिमाना शासन के प्रति घृणा प्रदर्शित की थी। वस, इसी जुर्म में उसकी तलाशी ली गई और उसे गिरफ्तार कर लिया गया।

मेरे भाई को खुफिया पुलिस ने कई महीने तक हवालात में रखा। मेरे भाई के वच्चे को क्षय हो गया था, वह मरणामन्न था। डाक्टर ने कह दिया था कि वह वस दो-चार दिन का मेहमान है। मेरे बड़े भाई ने अपने दुश्मनों ने कभी किसी रियायत के लिए प्रार्थना नहीं की थी, लेकिन इस बार मृत्यु के गुप्त में जानेवाले पुत्र के प्रेम ने उसे मजबूर कर दिया और उसने अपने वच्चे को देखने के लिए घटेभर की मोहलत मागी, पर पुलिस ने उसे अस्वीकार कर दिया। वच्चा चल बसा और उसकी मृत्यु ने मेरी भाभी को पागल-ना बना दिया। इसके बाद मेरे भाई को देश-निकाले का बट दे दिया गया। वे नाट-बेरिया भेज दिये गए, जहाँ वे १२ वर्ष रहे और जीवित न लौटे।^१

जार के भाई का आगमन

एक दिन अकस्मात् जार के भाई मेरी कोठरी में पधारे और अपने ही उन्होंने कहा, "गुड डे थ्रोपॉटकिन।" वे मुझे निजी तौर पर जानने से और उन्होंने चिर-परिचित स्वर में मुझसे पूछा।

"थ्रोपॉटकिन, भला यह कैसे मुमकिन हुआ कि तुम्हारे-ही त प्रतिष्ठित आदमी, जो जार का पार्षद रह चुका हो, इन नगर में आ पना ?"

^१ प्रिंस थ्रोपॉटकिन ने आगे चत्वार आत्मचरित्र में अपने जन्म की कथा पर जो दावद लिखे हैं, वे अत्यन्त नयत हैं। दोनों भाई १८८०-८१ में जन्म करके थे और अपने जयज की मृत्यु से निम्न वेत उनके जन्म की स्मरण लगा होगा। पर उन्होंने सिर्फ इतना ही लिखा है, 'मेरी मृत्यु के दो महीनों के बाद ही पदा छार रही और तत्पश्चात् एक न प्रभु ने एक नये प्राणी का जन्म हुआ, जिनने उन पदा से गुट जारि मिल की। उस प्राणी का नाम मेरे भाई पर ही रखा गया।' मुला है कि जो तर्कित है, मुला है कि कौन भी जीवित है और पेरिस में कोई दामन करी है।

मैंने उत्तर दिया—“हर आदमी के विचार अलग होते हैं।”

“विचार ! तो आपके विचार-क्रांति को उभारने के पक्ष में थे ?” जार के भाई ने पूछा ।

मैं इसका क्या जवाब देता ? यदि मैं ‘हां’ कहता तो उसका मतलब यह होता कि जिस आदमी ने मजिस्ट्रेट के सामने अपना अपराध स्वीकार नहीं किया था, जार के भाई के सम्मुख अपना कनूर कबूल कर लिया । और अगर मैं ‘न’ कहता तो वह सरामर झूठ होता । इसलिए मैं चुपचाप सटा रहा । जार के भाई मुझे चुप देखकर बोले :

“हां, तो जनाव अपने कारनामों से अब गर्मिदा है ?” इस बात से मुझे क्रोध आगया और मैंने कहा, “मुझे जो कुछ कहना है, मैंने जाच करनेवाले मजिस्ट्रेट से कह दिया है, मैं उनमें कुछ भी जोड़ना नहीं चाहता ।”

फिर वे बोले -

“अरे भई थ्रोपाटकिन, मैं तुमसे कोई जाच करनेवाले मजिस्ट्रेट की हैसियत में थोड़े ही बात कर रहा हूँ । मैं तो एक प्राइवेट आदमी की हैसियत से वार्तालाप कर रहा हूँ ।”

उम वक्त मेरे मन में एक बात आई । क्यों न जार के सामने उनके भाई की मार्फत रूम की दुर्दशा के, किमानों के सर्वनाश के, अफसरों की हिमाकत के और शीघ्र ही आनेवाले भयंकर अकाल के समाचार पहुंचा दू ? शायद उससे जार पर कुछ प्रभाव पड़े । फिर तुरंत ही मैंने मन में कहा, “ये सब फालतू बातें हैं, उनमें कुछ भी कहना बेकार है । गरीब जनता की दुर्दशा से वे भली भांति परिचित हैं और मेरे निवेदन में उनमें कुछ भी परिवर्तन न होगा ।

तत्पश्चान् जार के भाई ने मुझे और बातों में उलझाने की कोशिश की और मैं ताड़ गया कि वह मुझमें अपराध कबूल कराना चाहता है । आपस में बातें कर मुझे कहना पड़ा—“जनाव, मैं अपने जवाब मजिस्ट्रेट के सामने दे चुका हूँ ।” यह सुनकर जार के भाईमाह्व मेरी कोठरी छोड़कर चल दिये ।

×

×

×

इसके बाद प्रिंस थ्रोपाटकिन ने अपने जेल से भागने का जो रंमाचकारी वृत्तांत लिखा है, उसे ज्यो-कान्यो अगले अध्याय में दिया जाता है ।

मैं जेल से कैसे भागा ?

दो साल बीत चुके थे। मेरे साथियों में से कई मर चुके थे, बहुत-से पागल हो गए थे; लेकिन हमारे मुकदमे की सुनवाई की कोई चर्चा ही नहीं थी! मेरा स्वास्थ्य भी दूमेरे वर्ष का अत होते-होते गिरने लगा था। लकड़ी का स्टूल (जिससे मैं कसरत करता था) भारी लगने लगा और पाच मील का टहलना मानो बड़ा लंबा सफर! चूक किले में हम लोग साठ कैदी थे और जाड़ों में दिन छोटे होते थे, हममें से प्रत्येक तीमरे दिन सिर्फ बीस मिनट के लिए बाहर टहलने ले जाया जाता था। मैंने अपनी शक्ति को बनाए रखने की भरमक कोशिश की थी, लेकिन पूरे साल उत्तरी ध्रुव की सर्दी में रहने का असर होना ही था। साइबरिया की यात्रा के बाद मेरे शरीर में रक्त-रोग के जो लक्षण प्रकट होने लगे थे, वे अब कोठरी की नमी और अंधेरे के कारण पूरी तरह से व्याप्त हो गए। इस तरह की जेल की उस भयकर बीमारी का मेरे शरीर पर पूरा-पूरा असर होगया।

अखिर १८७६ के मार्च अथवा अप्रैल में हमें बताया गया कि तीमरे दस्ते (सुफिया पुलिस) ने प्रारम्भिक छान-बीन पूरी कर ली है और हमारा मुकदमा न्यायाधीशों के पास भेज दिया गया है। इसलिए हम अब कचहरी के पानचाली जेल में भेज दिये गए। यह जेल चार मजिल की एक बटी भारी इमारत थी, जिनमें कोठरी-ही-कोठरी थी। यह फ़ान और वेलजियम के कारागारों के नमूने पर हाल ही में बनी थी। प्रत्येक कोठरी में आगन की तरफ एक गिऊकी थी और लोहे के छज्जों की ओर एक दरवाजा। चारों मजिलों के ये छज्जे लोहे के एक खीने से मिले हुए थे।

हममें ने अधिकांश को इस जेल में आना जच्छा लगा। वहा उस किले से नही अधिका चल्-पहल थी और बाहर के बादमियों से पत्र-व्यवहार,

अपने रिश्तेदारों से मिलने अथवा आपस में बातचीत करने की सुविधा भी अविद्य थी। बिना किसी रोक-थाम के दीवारों पर ठुक-ठुक जारी रहती थी। इसी तरह मैंने अपने पड़ोसी युवक को पेरिन-कम्प्यून् का सारा इतिहास सुना दिया, पर इसमें लगभग एक सप्ताह लग गया।

लेकिन मेरा स्वास्थ्य और भी खराब होगया। उस तग कोठरी का, जो एक कोने से दूसरे कोने तक सिर्फ चार कदम थी, संकीर्ण वातावरण मुझे असह्य था। जैसे ही भाप की नलिया चालू की जाती, वह बर्फ-जैसी ठंडी कोठरी एकदम हृद से ज्यादा गरम हो जाती। कोठरी में टहलने के लिए जल्दी-जल्दी मुड़ना पड़ता था, इसलिए थोड़ी देर में ही चक्कर आने लगते और दस मिनट की खुली हवा की कसरत भी, आगन तंग होने के कारण, स्फूर्तिप्रद नहीं होती थी। जेल का वह डाक्टर, जिसके विषय में जितना ही कम कहा जाय, उतना ही अच्छा, 'अपनी जेल में' 'रक्त-रोग' का नाम भी नहीं सुनना चाहता था।

मुझे घर में खाना मगाने की अनुमति मिल गई थी, क्योंकि मेरे एक रिश्तेदार वकील इस जेल के नजदीक ही रहते थे। लेकिन मेरी पाचन-क्रिया इतनी खराब होगई थी कि मुझिल से रोटी का छोटा टुकड़ा और एक-दो अंडे खा पाता। मेरा स्वास्थ्य दिन-पर-दिन गिरने लगा और लोग कहने लगे कि अब मैं बहुत दिनों तक जीवित नहीं रह सकूंगा। अपनी कोठरी में जाने के लिए जब मैं जीना उतरता था, तो मुझे दो-तीन बार रुकना पड़ता था। मुझे याद है कि एक बृद्ध पहरेदार मियाही ने मुझमें कहा था—
“दुख है कि तुम इन बसन के आविरतक न बच सकोगे।”

मेरे रिश्तेदार अब अत्यंत चिन्तित होगए। मेरी बहन हेलेन ने मुझ जमानत पर छुड़ाने का प्रयत्न किया; लेकिन गूविन (अफसर) ने व्यग्र में नुमकगते हुए उत्तर दिया—“अगर तुम डाक्टर का निम्ना हुआ यह गर्टी-फिकेट ले आओ कि तुम्हारा भाई दस दिन के भीतर मर जायगा, तो मैं उसे छोड़ दूंगा।” मेरी बहन यह जवाब पाकर कुर्मी परने घडाम में गिर गई और अफसर के सामने ही मिसरने लगी, जिनमें उस अफसर को ननोप ही हुआ

होगा ! लेकिन अंत में उसने अपनी यह प्रार्थना मजूर करायी कि जिसेन इलाज सेंटपीटर्सबर्ग में फौजी अस्पताल के सबसे बड़े डाक्टर द्वारा देना चाहिए। इस वृद्ध हीशियार डाक्टर ने बहुत ही अच्छी तरह मेरी हालत की जांच वह इस निर्णय पर पहुंचा कि मुझे कोई भयंकर नारीयंत्रि रोगाणी नहीं, केवल शुद्ध वायु न मिलने के कारण रक्त-रोग होगया है। उसने मुझे कहा— “केवल शुद्ध वायु की ही तुमको जरूरत है।” थोड़ी देर के लिए वह अस्पताल में रहा और तत्पश्चात् उसने निश्चयपूर्वक कहा— “ज्यादा बातचीत शिस्त है। तुम्हें किसी भी हालत में वहां न रहने दिया जाना चाहिए, दूसरी जगह भेजना ही है।”

दस दिन बाद मुझे एक फौजी अस्पताल में भेज दिया गया। यह अस्पताल सेंटपीटर्सबर्ग के बाहर बना था। रक्त-रोगी अस्पतालों की भाँति यहाँ के लिए एक छोटी जेल भी थी। मेरे दो नारी, जब वह निश्चिन्ता हो गया कि वह थोड़ा ही तपेदिक में मर जायगे, उसी जेल में भेजे गए थे। यहाँ जेली की मेरी तंदुरुस्ती ठीक होने लगी। मुझे फौजी गाँव के कम्बरे के पास की एक छोटी-सी कमरा मिला। कमरे में दक्षिण की तरफ खोले के नीचे का एक छोटा कमरा था। खिड़की के सामने एक मडक थी, जिसके दोनों तरफ दो-दो बेंच थे, और मडक के उम पार मुली जगह थी, जहाँ दोनों तरफ निम्नरी रक्त-रोगियों के रहने के लिए छोटे-छोटे कमरे बनाए थे। ये कमरे जो एक-दूसरे से घटेतक ये बढई मिलकर बाना गाने थे। एक नारी, जो मेरे कम्बरे की तैनात था, मडक पर पहना देना रत्ना था।

मेरी खिड़की को दिनभर खुली रखना और ताज़े हवा लेने के लिए नमीच नहीं हुई थी, मुझे गिया लगता। यहाँ जेल की नमीच बाहर से आने की तरह नाम लेने का अवसर मित्रों का भेग नगलाना ही न हो सके। मैं हल्का खाना पचा नेता, नाश्ता भी नाश्ता लेने की शक्ति नहीं रखता था। फिर नए उल्हाह से आरम्भ कर दिया। जब मैंने देखा कि मैं अपने रक्त-रोग का दूसरा भाग किसी भी तरह नगलाना नहीं कर सकता तो मैंने अपने रक्त-रोग ही लिए जला—जहाँ बाद में मुझे भाग में ही गया।

किले में मैंने एक नाथी से, जो इन अस्पताल में रह चुका था, सुना था कि यहाँ से भाग जाना बहुत मुश्किल नहीं है। शीघ्र ही मैंने अपने मित्रों को यहाँ आने की सूचना दे दी। लेकिन भागना उतना आसान नहीं था, जितना मेरे दोस्तों ने मुझसे कह रखा था। मेरा पहरा और भी ज्यादा कडा कर दिया गया और मेरा कमरे से बाहर निकलना भी बंद कर दिया गया। अस्पताल के सिपाही और मंतरी यदि कमरे में आते, तो कभी एक या दो मिनट से ज्यादा नहीं ठहरते थे।

मित्रों ने मेरे छुटकारे के लिए कई-एक योजनाएं बनाईं। कुछ तो उनमें अत्यंत मनोरंजक थीं। उदाहरण के लिए एक योजना यह थी कि मैं खिड़की के लोहे के सींकचे काट लू। फिर किसी बरसात की रात को, जब संतरी अपने सद्रुक में झपकी ले रहा हो, दो मित्र पीछे से आकर इस सद्रुक को इस होशियारी से उलट दें कि उसे चोट भी न लगे और वह सद्रुक से ढंक जाय ! और इसी बीच मैं खिड़की में बाहर कूद जाऊं ! लेकिन अचानक ही इससे अच्छी तरकीब निकल आई।

“बाहर टहलने की अनुमति मांगो।”—एक सिपाही ने धीरे-से मुझसे कहा। मैंने तदनुसार प्रार्थना की। डाक्टर ने मेरा ममर्थन किया और हर रोज तीसरे पहर चार बजे के लगभग मुझे टहलने की आज्ञा मिल गई।

उम पहले दिन को, जब मैं टहलने निकला, मैं कभी नहीं भूलूंगा। निकलते ही मैंने देखा कि करीब २०० गज लंबा और १५० गज चौड़ा हरी घास का आंगन है। फाटक खुला रहता और उममें से अस्पताल, मडक और उसके राहगीर दीखते थे। जब मैं जेल की मीढियों से उतरता तो आंगन और उम फाटक को देखते ही रह जाता, मानो पैर ही रुक गए हों ! आंगन में एक तरफ जेल थी—करीब १०० गज लंबी छोटी इमारत थी, जिसके दोनों तरफ मंतरियों के छोटे-छोटे सद्रुक थे। दोनों सतरी जेल के सामने इधर-से-उधर चक्कर लगाते रहने और इस तरह धान पर एक पगडंडी ही बन गई थी। मुझसे कहा गया कि मैं इसी पगडंडी पर टहला करूं। चूंकि दोनों मंतरी भी इसीपर टहलते रहते थे, इसलिए मेरे और किसी संतरी के

बीच का फामला कभी १०-१२ गज में ज्यादा न रहता, और जंगलान के तीन सिपाही मीठियों पर बैठकर चौकनी करने रहते ।

इस वटे अहाते की दूसरी ओर जगल लकड़ी गाड़ियों में उतारी जा रही थी और कई किसान उमे दीवार के महारे लगा रहे थे । अहाते के दोनों तरफ मोटे तख्तों की दीवार थी और उसका फाटक गाड़ियों के आने-जाने के लिए खुला रहता था । यह खुला फाटक मुझे बहुत अच्छा लगता । मन में सोचता, "मुझे इस तरफ दृष्टि नहीं गटानी चाहिए ।" फिर भी मैं उनी तरफ देखता रहता ! पहले दिन जब मुझे कोठरी में वापस पहुँचाया गया तो गुप्त वाहर के मित्रों को कापते हुए हाथों ने अत्यन्त अस्पाट अधरो में मंने लिखा— "इस समय इगारे की भाषा में लिखना अमम्भव-मा प्रतीत होता है । वना में भागना तना आसान लगता है कि दुगार-जैनी अपरारी माटूम होती है । आज ये लोग मुझे वाहर आंगन में टहलाने ले गए थे । वहा फाटक खुला था और नजदीक कोई मंतरी भी न था । उन फाटक ने मैं निरन्त भागना, वना के मंतरी मुझे पकड नहीं सकेगे ।" और फिर मंने आने भागने की त्तरी का खुलासा लिखा— "एक महिला को खुली गाडी में अन्ततत धरना है । वह गाडी से उतरे । गाडी फाटक से लगभग ५० वरम की दूरी पर गयी है । फाटक के वाहर एक आदमी टहलता रहे । जब चार बजे में टहलने के लिए निकाला जाऊ, तो थोडी देर हाथ में टोप लिए टहलना । वर बादमें टहलने मतलब समझे कि वहा मेरी त्तारी है । फिर तुम लोगों को ज्ञाना करा है कि 'मडक नाफ है' । बिना तुम्हारे ज्ञारे के मैं नहीं भागना, और वना दफा फाटक से वाहर हो जाऊ तो निरस्पता नही होता है । मा वं आत वंन सामने का हरा बगला, जो वहा में नाफ दीजता है, लिखने के लिए मैंने वर उमाती खिठकी में दगारा कर दे, और यदि वर मभय नती वी अन्तत इशारा रोशनी या आवाजो में करना, जैसे गाँववाले किसी वना अन्तत कर दे । इसने भी बेहतर होगा कि कोई गाता होता रहे । लिखने अन्तत होगा कि सडक साफ है । मंतरी गिटारी कुते की त्तरी वना में वंन वंन, लेकिन जिनी तरह में उनने १०-५ वरम आगे ली रूना । अन्तत वर में वंन

में झपटकर बैठ जाऊंगा और फिर हम लोग भाग जायेंगे। अगर इस बीच सतरी ने गोली मार दी, तो फिर चारा ही क्या है? उससे बचना अपनी सूझ से बाहर है। फिर यहां जेल के भीतर निश्चित मौत के मुकाबले में यह खतरा कुछ बुरा तो है नहीं।”

कई सुझाव और भी दिये गए; लेकिन आखिर यही तरकीब स्वीकृत हुई। हमारे मित्रों ने तैयारियां शुरू कर दी। इसमें कुछ ऐसे मज्जनों ने भी भाग लिया, जो मुझे बिल्कुल न जानते थे। फिर भी उनका जोश ऐसा था, मानो उनके अत्यंत प्रिय मित्र का छुटकारा होने जा रहा हो। लेकिन इस उपाय में कुछ मुज्जिले थीं और समय कम रह गया था। मैं सूब मेहनत करता, राततक लियता रहता; लेकिन फिर भी मेरा स्वास्थ्य अच्छा होने लगा—इतनी जल्दी कि स्वयं मुझे आश्चर्य होता। जब मैं पहले दिन आगम में लाया गया था तो धीरे-धीरे चलने में भी थकान मालूम होती थी और अब मैं दौट सकता था! लेकिन मैं तो अब भी उसी तरह धीरे-धीरे टहलता था, वरना मेरा टहलना ही बंद कर दिया जाता। डर लगता रहता कि कहीं मेरी स्वाभाविक फुर्ती सारा भेद ही न खोल दे! और इस बीच मेरे साथियों को इनके लिए बहुत-से आदमी जुटाने थे, एक तेज घोड़ा और अनुभवी गाड़ीवान ढूँढना था और ऐसी बीसियों बाधाओं का भी खयाल करना था, जो इस तरह के पद्यन में तत्काल उपस्थित हो जाती हैं। इन सब तैयारियों में लगभग एक माह लग गया और इस बीच किसी भी दिन मुझे पुरानी जेल में भेजा जा सकता था।

आखिर भागने का दिन निश्चित हो गया। पुराने रिवाजों के अनुसार २९ जून मत पीटर और संत पाल का दिन है। मेरे मित्रों ने अपने पद्यंत्र में थोड़ी भावुकता का पुट देकर मेरे छुटकारे के लिए इसी दिन का निश्चित किया! उन्होंने मुझे सूचित कर दिया था कि जब मैं अपनी तैयारी का इशारा करूंगा, तो वे एक लाल गुट्टारा उठाकर मुझे जता देंगे कि बाहर सब ठीक है। फिर एक गाड़ी आवेगी, और आखिर में एक गाना होगा, जिनमें मुझे मादूम होजाय कि मटक साफ है!

२९ तारीख को मैं बाहर निकला और टोप उतारकर गुब्बारे का इंतजार करने लगा, लेकिन वहाँ कुछ भी न था। आया घटा घाना, नञ्च पन गाडी की सड़खटाहट मुनाई दी। एक आदमी को गाते हुए भी मुना, लेकिन गुब्बारा नञ्चर नहीं आया। आया घटा खत्म हुआ और मैं अन्त निराश होकर अपने कमरे में लौट आया। सोचा कि कुछ कामा भागई होगी।

उस दिन मचमुच अनहोनी होगई थी। नेटपीटमंवरंग में नेटपीट गुब्बारे वाजार में बिका करते हैं, लेकिन उन दिन एक भी गुब्बारा न था। एक ठो वच्चे से एक गुब्बारा लिया गया, लेकिन वह पुराना था, उड़ा ही नहीं। नेट मित्र फिर एक चग्मेवाले की दूकान में हाउट्रोजन बनाने का पन लये। उनमें एक गुब्बारा भरा भी, लेकिन वह उड़ा ही नहीं। हाउट्रोजन में नमी न थी। समय थोडा बचा था। फिर एक छाने में गुब्बारे कां वाया गया और एक महिला इस छाने को ऊचा करके अहाने की दीवार के नञ्चने पन लयी, लेकिन मुझे कुछ भी न दीया पड़ा—दीवार बहुत ऊर्ची थी और नञ्च मञ्चिा बहुत ठिगनी ! बाद को ज्ञात हुआ कि उन दिन गुब्बारे का न मञ्चिा ही टीन हुआ। जब मेरे भागने का समय निकल गया तो गाडी पूर्व-निश्चिा गन्ने पन दीलाई गई। उसी सञ्क पर दन-बाराह गाडिा जञ्चताल के सिञ्च लञ्चिी ले रही थी। इन गाडिीयो के कुछ छोटे दार्ज और भागे, कुछ दार्ज और। नञ्चिा यह हुआ कि हमारी गाडी बहुत धीमे-धीमे चल गयी और एक मञ्चिा दन गी विल्कुल ही रुक गई। अगर मैं उगमे होना तो निश्चिा गन में लञ्चिा सिञ्च गया होता।

अब उस सञ्क पर कई जगह उगारे देने का प्रयत्न किया गया कि नञ्चिा मालूम हो जाय कि सञ्क माफ है या नहीं। उगारा नञ्चिा ने दो मञ्चिा ले लीं और मेरे साथी सतखियो की तग्ल गये हुए। एक नामी लञ्चिा में लञ्चिा सिञ्चिा पर टहलता था—यदि नामने गाडी दीने तो नञ्चिा लञ्चिा लेने में लञ्चिा ले। दूसरा साथी मूगफली गते हुए एक पञ्चक पर सिञ्चिा लञ्चिा—मैंने भी लञ्चिा दीने, मूगफली खाना बर कर दे। मैं नञ्चिा लञ्चिा सिञ्चिा सिञ्चिा लञ्चिा लञ्चिा

उस घोड़ागाडीतक पहुंचने थे। मेरे मित्रों ने सामने का हरा बंगला भी, जो फाटक के सामने ही था, किराये पर ले लिया था, और जैसे ही सड़क साफ हो, उसकी खिड़की में एक आदमी को वायलिन बजाना था।

अब अगला दिन निश्चित हुआ। ज्यादा देरी खतरनाक होती। वास्तव में अस्पताल के अधिकारियों ने गाडी का आना-जाना नोट कर लिया था। कुछ सदेहात्मक खबरें भी उनके पास अवश्य पहुंच गई होंगी, क्योंकि भागने में एक रात पहले मैंने अफसर को सतरी में कहते हुए गुना था—“तुम्हारे कारतूस कहा है?” सतरी ने अपने कारतूस निकाल लिये तो अफसर ने कहा—“क्या तुमसे नहीं कहा गया कि आज रात को चार कारतूस अपनी जेब में तैयार रखना?” और वह तबतक वहां खड़ा रहा, जबतक सतरी ने चारों कारतूस अपनी जेब में न रख लिये! जब वह चलने लगा तो फिर आज्ञा दी—“मुस्तैद रहो!”

उन सब इमारतों की रूप-रेखा मुझतक पहुंचानी थी। दूसरे दिन दो वजे मेरी एक रिश्तेदार मुझे घड़ी देने जेल आईं। वैसे तो मेरे पास हर चीज एक अफसर के मार्फत आती थी, लेकिन चूंकि यह घड़ी खुली थी, मेरे पास मांघी पहुंचा दी गई। इस घड़ी में एक छोटा पुर्जा था जिसमें सारी तरकीब लिखी थी। मैं तो उसे पटककर काप गया! कितनी हिम्मत और कौमी दिलेरी का काम था! यदि किमीने घड़ी के ढाकन को प्योल लिया होता, तो वह महिला, जिसका पीछा पुलिस पहले से ही कर रही थी, तुरत वहीं गिरफ्तार हो जाती। लेकिन मैंने देखा कि वह जेल के बाहर सड़क पर निकल गई और नौ-दो-ग्यारह होगई!

नद्वै की भांति मैं चार वजे बाहर निकल आया और मैंने अपना इशारा कर दिया। थोड़ी देर में गाडी की गड्ढाहाट सुनाई दी और हरे बगले में वायलिन की ध्वनि भी आई। लेकिन उस वकत मैं अहाते के दूसरे कोने पर था। मैं फाटक की तरफ चला—मन में नोचा, ‘बम, कुछ क्षण और!’ लेकिन फाटक के पास पहुंचने ही महत्वा वायलिन बजना बंद होगया। करीब १५ मिनट बड़ी फिर में बीते। नोचना, ‘वायलिन बंद क्यों होगया!’ कुछ समय

बाद ही देखा कि कोई एक दर्जन गाड़िया फाटक मे अग्राने मे आरं । नुरत ही वायलिनवाले मज्जन ने एक जोशीये चीज छेटी, मानो वह कह रहा हो—“बन, यही बन है, आगिरी मीका ।” मे धीरे-धीरे जानता हुआ फाटक की ओर चला—इस आशका मे कि कही वायलिन फिर बंद नहो जाय ।

फाटक पर पहुचकर मेने मुडकर देखा कि मनरी ५-६ उदम पीछे था और उल्टी तरफ देख रहा था । ‘बन यही मीका है’—मेने मन मे आया । तुरत मेने जेल की पोयाक उतार फेंकी और दौटने लगा । उस लकडी-चौटी पोयाक को उतारने का अभ्यास मे बहुत दिनों मे कर रहा था । वह गोट उतना बडा था कि किमी भी तरह एक मघाटे मे उतरता ही नही था । मेने उसकी बाहों के नीचे की मिलाई काट दी, फिर भी काम नही चल । आगिर मेने उमे दो हकतो मे उतारने का अभ्यास प्रारभ किया, पहिले उमे बाह मे उतारता और बाद मे उमे नुरत जमीन पर पटकता । धीरे-धीरे मे इस क्रिया मे पारगत हो गया ।

मुझे अपनी शक्ति पर बहुत विश्वास नही था, इसलिए उम वाली शक्ति के लिए शुरू मे धीरे-धीरे दौटा । लेकिन मे कुछ ही उदम भागा गेऊगा कि किमान, जो दीवार के सहारे लकडी लगा रहे थे, चिल्लाने लगे—“कहाँ ! पकडो ! वह भाग रहा है ।” और ये मुझे फाटा पर रोका भी दौटा । अब तो मे पूरे जोर मे दौटा । मेने मन मे बन केवल एक ही बात थी—“बन दौटो !” फाटक के नजदीक गाड़ियो ने जो गड्ढे बना दिए थे उन्हे मेने नयाल नही किया ।

मेरे मित्रो ने, जो हने बगले मे मुझे भागते देख लें थे, बाग्मे दौटता कि मनरी ने तीन मिपाहियो के साथ मेरा पीछा किया था । मनरी और मेने मे फासका कम था और उमे बगलर अती दिग्दर्शक बना गया कि उमे मेरा पीछा । कई दफा उमने अपनी बहूक की नगील मेरे पीछे मे भेजे थे कि भागे दौटो भी । एक दफा तो मेरे मित्रो ने माना कि फासका कम था । मनरी को पूरा विश्वास था कि उमे मुझे पकड लेगा और उन्ही मुझे पकड ले

नहीं दागी। लेकिन मैं उसमें आगे ही रहा और अंत में तो वह बिल्कुल पिछड़ गया!

फाटक के बाहर निकलकर देखा तो दग रह गया—गाड़ी में एक अफसर फाँजी टोप पहने बैठा था, उसने मेरी तरफ देखा भी नहीं। मन में सोचा, 'बस, खाल्ता होगया!' मित्रों ने लिया था कि सड़क पर आने के बाद हार्गिजन न घबराना। वहाँ तुम्हारी रक्षा के लिए कई साथी उपस्थित रहेंगे। मैंने निश्चय किया कि जिम गाड़ी में दुश्मन बैठा है, वहाँ न बैठूँ। लेकिन जैसे-ही मैं गाड़ी के करीब पहुँचा, मैंने देखा कि इस अफसर के मेरे एक पुराने दोस्त की तरह के भूरे गलमुच्छे हैं। वह दोस्त हमारे गुट में तो नहीं था, लेकिन मेरा निजी मित्र अवश्य था और उसकी दिनेरी, और खासकर सतरे के मॉके पर उसकी हिम्मत को मैं जानता था। मन में सोचा, 'वह यहाँ इस वकल कैसे आ सकता है!' मैं उसका नाम लेकर पुकारनेवाला ही था, लेकिन फिर अपनेको जन्न किया और उसका ध्यान आकर्षित करने के लिए तालिया पीटी। अब उसने मेरी ओर मुड़ किया और तुरत मैं उसे पहचान गया।

वह रिवातवर हाथ में लिये तैयार था। मुझसे कहा—“जल्दी बँटो।” और तुरंत गाड़ीवान ने कहा—“जल्दी भगाओ, नहीं तो तुम्हारी जान की खतर नहीं।” घोड़ा बहुत ही अच्छा था। वह साम उमी मॉके के लिए लाया गया था। पूरी नेजी में दीडा। पीछे में सँकड़ो आवाजे आ रही थी—“पकड़ो! पकड़ो! भाग न जाय!” मेरे मित्र ने उमी नमय मुझे एक शानदार ओवर-कोट पहना दिया। लेकिन पीछा करनेवालों से भी ज्यादा खतरा उम नतरी में था, जो अस्पताल के फाटक पर ही तैनात था, गाड़ी के गड्डे होने की जगह के ठीक सामने। वह थोड़ा ही आगे बढ़कर आनानी में मुझे गाड़ी में चढ़ने में रोक नकता था। इसलिए एक मित्र को इन निपाही का ध्यान बटाने के लिए रजा गया था। और इस मित्र ने किया भी वह काम बड़ी सूबी में। वह निपाही पहले अस्पताल के रमायन-विभाग में काम कर चुका था। मेरे मित्र ने सुदुर्दान और उसके द्वारा दीगनेवालों चीजों के बारे में उममें बहस छेड़ दी। मनुष्य-शरीर पर रहनेवाले एक कौटाल के विषय में उमने निपाही

ने पूछा—“तुमने कभी देखा है कि उनके दिवनी लकी पूछ जाती है ?”
 “क्या बकने हो ? पूछ ?” फिर उसने कहा—“जी हाँ, उनके पूछ जाती है
 और काफी बड़ी; खुदवीन से माफ दीवनी है ।” निगाही ने उत्तर दिया—
 “अच्छा ! अपने ये किसने तुम मुझे न मुनाओ ।” मैंने मित्र ने फिर कहा—
 “इसके बारे में ज्यादा जानना है—सबसे पहले तो खुदवीन से मैंने पूछ ही लेता
 था ।” जब मैं उनके नजदीक से भागकर जपाटे के पास गाड़ी में बैठ गया
 यहाँ वह हम चला रही थी । पाठको को यह घटना निम्न-तहानी-नीं कनेगी,
 पर है यह पूर्णतया सत्य ।

गाड़ी तुरत एक तग गली में मुड़ गई—उनी दीवान जी नगर,
 जिनके गहारे किमान लकड़ी रख रहे थे । अब ये सब किमान भेग
 पीछा करने में लगे थे । गाड़ी ने मोड़ उनसे जपाटे से लिया कि तराद-
 करीब उलट ही गई ! मैं तुरत आगे की ओर बड़ गया और मित्र जी भी आगे
 पीछ लिया, इससे गाड़ी उलटने में बच गई ! तग गली को पार कर कर दाईं
 तरफ मुड़े । वहाँ एक नार्वजनिक मस्था के नामने दो गंगना निगाही गये
 थे । उन्होंने हमारे माथी की फाँजी टोपी को नज़रामी दी । वह अब भी नार्गी
 उत्तेजित था, इसलिए मैंने उससे कहा—“धान हो !” उनमें उत्तर दिया—
 “सब ठीक ही रहा है, फाँजी आदमी हमें नज़रामी दे रहे हैं ।” जब गाड़ीवान ने
 मेरी तरफ मुड़ किया । मैंने देखा कि वह भी अपना एक पुराना दोस्त ।
 हमारा घोंडा तेज चाल में भागा जा रहा था । हर जगह हमें मित्र का
 मिले । वे हमें इनाम कर रहे थे और हमारी नका साना से लिए सगा-
 पागनाए ! जब हम एक दरवाजे पर उतरे और गाड़ी को आगे भेग दिया ।
 मैं भीषा खीना चढ़ गया और अपनी गाड़ी में मिला । वह घोंडा सगाए
 और साथ अत्यत चितित भी । हमें और पिछले के सग उन्ना
 भागो में थे । उनमें मुझे तुरत दूसरी घोंडा पागने और नगी निगाहा
 शरी को मुड़ करने से लिए कहा । दर मित्र ने भीषा में मित्र जी
 में पर से पर दिवें और एक दूसरी गाड़ी लेनी ।

एक घोंडा इन्नाम से पारनेदार निगाही और उन्ना उन्ना उन्ना

निकले और मोचने लगे कि क्या किया जाय। आन-मान एत मीमनरु कोई गाडीही न थी, मभी गाडिया हमारे मियो ने किराये पर ले रती थी। उग भीट की एक किमान बुडिया इन मवमे हांगियारयी। उमने धीरे-मे कहा—“बेचारे कैदी ! वे लोग प्रोमपैक्ट पर अवज्य पहुचेंगे, और अगर कोई आदमी इन रास्ते से दौड़कर मीधा वहा पहुचे तो वे मचमुनही पकडे जायगे।” वह बिल्कुल ठीक कह रही थी। अफसर नजदीकवाली गाडी पर गया और उन आदमियों मे प्रार्थना की कि वे धोटे दे दें, लेकिन उन्होने देने से साफ इकार कर दिया और अफसर ने भी बल-प्रयोग नहीं किया। और वे वायलिन बजाने-वाले सज्जन और वह महिला भी, जिन्होंने हंग बगला किराये पर लिया था, बाहर निकल आये और उन बुडिया के साथ भीट मे शामिल होगए। जब भीड छट गई तो वे भी चपन होगए।

उन दिन तीसरे पहर मीमम भी अन्ठा था। हम लोग उन टापुओं की ओर चल दिये, जिवर मेटपीटमंवरग के अधिकाश उच्च श्रेणी के लोग बगत ऋतु मे सूर्यास्त देखने जाया करने थे। रास्ते मे बगल की मडक पर एत नाई की दूकान पर मैंने अपनी दाटी भी मफाचट कर ली। अब मुझे पहचानना काफी मुश्किल था। हम लोग उन टापुओं मे अपनी गाडी मे उधर-मे-उधर काफी देर तक चक्कर लगाने ग्हे। हममे कह दिया गया था कि अपने गन के विश्राम-स्थल पर जग देर मे पहुचे। अब मवाल था, इम बीच कहा जाय ? मैंने मार्या मे पूछा—“अब क्या करे ?” वह भी थोड़ी देर मोचता रहा और फिर तुरंत गाडीवान मे कहा—“गेनोन, होटल ले चलो।” यह मेटपीटमंवरग का मवमे शानदार होटल था। वह बोला—“तुम्हे देखने के लिए कोई भी आदमी उन आरीमान होटल मे न पहुचेंगा। वे तुम्हे मव जगह ढुङ्गे, लेकिन उन जगह ता सिनीतो मवाल भी न आवेगा। वहा हम लोग भोजन करेंगे और फिर कुछ मुरापान भी—तुम्हारे छटकारे की मफलता की मुर्गी मे।”

मन्ना, एंमे मुनानिव मुजाव ना मे जवाबही क्या देना। हमन्निग हम लोग दोनों पहुचे। गन के भोजन ता ममय था। कमरा मे शानदार उजाला हो रहा था और वे आदमियों ने भंर थे। उन मवकों इमने पार किया और एत

अलग कमरा किराये पर लिया और वहाँ तबतक रहे, जबतक पूर्व निर्दिष्ट स्थान पर हमारे पहुँचने का समय नहीं होगया। जिन मकान में हम पहले-पहल उतरे थे, उसकी तलाशी हमारे वहाँ से हटने के थोड़ी देर बाद ही हो गई। लगभग सभी मित्रों के घरों की तलाशी हुई, लेकिन डीनोन में ढूँढने की किसीको न सूझी।

दो दिन बाद मुझे एक कमरे में चले जाना था, जो मेरेलिए एक फर्जी नाम से किराये पर ले लिया गया था। लेकिन जो महिला मेरे साथ जानेवाली थी, उन्होंने उन मकान को पहले देखा जाने की होशियारी की। उन मकान के चारों तरफ जासूस थे। कई मित्र मुझसे कहने आए कि वहाँ जाना अब स्वतंत्र से ग्याली नहीं। पुलिस अत्यन्त सतर्क हो गई थी। गुफिया-विभाग ने मेरी तन्वीर की सहाय्य प्रतिया छपवाकर बटवा दी थी। जो जासूस मुझे पहचानते थे, मुझे गडकों पर तलाश कर रहे थे। जो पहचानते नहीं थे, वे उन पहरेदारों को साथ लिये घूम रहे थे, जिन्होंने मुझे जेल में देखा था। जार बहुत ही क्रुद्ध था कि उसकी राजधानी में ही मैं दिन-ब्रहाडे उन तरह भाग गया। उसने हुसम दे दिया था—“क्रोपॉटकिन को जल्द ही पकड़ना है।”

मेट्रोपॉलिटन में बने रहना असम्भव था, इसलिए मैं नज़दीक के गावों में छिपा रहा। पाच-छ दोस्तों के साथ मैं उन गाव में रहा, जहाँ उन माँगम में मेट्रोपॉलिटन के लोग तफरीह के लिए आया करते थे। फिर तय किया गया कि मुझे जल्दी बाहर ही चला जाना चाहिए। लेकिन एक विदेशी पत्र द्वारा हमें मालूम होगया था कि बाल्टिक और फिनलैंड प्रान्तों की सीमाओं के नये स्थानों और स्टेजनों पर वे जासूस तैनात थे, जो मुझे पहचानते थे। इसलिए मैंने निश्चय किया कि उन तरफ चहुँ, जिस तरफ तिनोरा ख्याल ही न पहुँचे। एक मित्र ता पामपोट लेजर और इनके मित्र को साथ लेकर मैंने पिनरुड की सीमा पार की और सीमा रोषोनिया की राती के एक बदर-गाव पर पहुँचा। वहाँ मैंने स्वीटन निवास बना।

उस में ताज पर बैठ गया और था करने की रात था, तो मेरे साथी ने मेट्रोपॉलिटन की तरफ मुझसे। नन्हा ने मेरी दातन को

गिरफ्तार कर लिया था। मेरे भाई की माली भी, जो भाई और भाभी के माइबेरिया चले जाने के बाद मुझमें हर महीने मिलने आती थी, हिरासत में ले ली गई थी। मेरी बहन को तो मेरे जेल में भागने के बारे में कुछ भी पता न था। जब मैं भाग आया था, उनके बाद मेरे एक मित्र ने उसको यह सब सुनाई थी। मेरी बहन ने बहुत-कुछ कहा, आर्जून-मिश्र की जि मुझे कुछ भी पता नहीं; लेकिन फिर भी पुलिस उनको उनके बच्चों से अलग करके ले गई और पंद्रह दिन जेल में रखा। मेरे भाई की माली को शायद कुछ भान तो हो गया था कि कुछ तैयारियाँ हो रही हैं; लेकिन उनमें उनका हाथ बिल्कुल न था। अधिकारियों में यदि तनिक भी दुश्मिनी होती तो समझ लेते कि जो महिला हर महीने नियमपूर्वक मुझमें मिलने आती थी, कम-से-कम वह तो इस पड़्यत्र में शामिल न होगी। उसको दो महीने जेल में रखा गया। उसके पति ने, जो एक प्रतिष्ठित वकील था, उसे छुटाने का भरपूर प्रयत्न किया। उन अधिकारियों से उत्तर मिला, "हमें भी मालूम होगया है कि इस उद्यम में इस महिला का कोई हाथ नहीं; लेकिन जिस दिन हमने इसे गिरफ्तार किया था, हमने जार को यह सूचना भेज दी थी कि पड़्यत्र की मचालिका गिरफ्तार कर ली गई है और अब जार को यह समझाने में देर लगेगी कि पड़्यत्र में इस औरत का कोई भवध नहीं!"

बिना वही रूके मैं स्वीटन पार कर गया और क्रिश्चियाना पहुँचा। वहाँ हल नामक बंदरगाह के लिए जहाज मिलनेतक इतजार करता रहा। जब मैं जहाज पर पहुँच गया, तो मैंने जग चिन्तित होकर मोचा—जहाज के ऊपर झट्टा कहा का है—नारवे का, जर्मनी का या इंग्लैंड का? तुरंत मुझे दीया, जहाज के ऊपर यूनिवर्सल जैक फहरा रहा है—वही झट्टा, जिसके नीचे स्टालियन, रूसी, फ्रान्सीसी और सभी देशों के शरणार्थियों को शरण मिली है! मैंने हृदय में उन पतावा का अभिनदन किया।^१

^१ उपर्युक्त वृत्तांत श्रोपटकिन् के आत्म-चरित से लिया गया है।

'मंडल' द्वारा प्रकाशित प्राप्य साहित्य

गांधीजी लिखित		उगावात्स्योपनिषद्	=)
प्रार्थना प्रवचन (भाग १)	३)	सर्वोदय-विचार	१=)
" " (भाग २)	२॥)	स्वराज्य-शास्त्र	॥॥)
गीता-माता	४)	नू-दान-यज्ञ	१)
पद्मह अगस्त के बाद	१॥), २)	गांधीजी को श्रद्धाजलि	१=)
धर्मनीति	१॥), २)	राजघाट की तनिधि में	॥=)
द० अफ्रीका का सत्याग्रह	३॥)	विचार-धोयी	१)
मेरे समकालीन	५)	सर्वोदय का धोपना-पत्र	१)
आत्मकथा	४)	जमाने की भाग	=)
आत्म-मयम	३)	नेहरूजी की लिखी	
गीता-बोध	॥)	मेरी कहानी	८)
ग्राम-सेवा	१=)	हिन्दुस्तान की नमन्याए	२॥)
मंगल-प्रभात	१=)	लक्ष्मणजी दुनिया	२)
सर्वोदय	१=)	राष्ट्रपिता	२)
नीति-धर्म	१=)	राजनीति में दूर	२)
आश्रमचानियों से	१=)	सिख उग्रहाण की उत्पत्ति सं०	९)
हमारी भाग	१)	हिन्दुस्तान की कहानी	न० २॥)
सत्यवीर की कथा	१)	अन्य लेखकों की	
सक्षिप्त आत्मकथा	१)	आत्मकथा (राजेंद्रदास)	८)
हिंद-स्वराज्य	॥॥)	गांधीजी की देन	॥॥)
अनोत्ति की राह पर	१)	गांधी-भाग	=)
बापू की नीति	॥)	मत्तानाग-कथा (गणेश)	५)
गांधी-शिक्षा (तीन भाग)	१=)	बुद्धजा सुन्दरी	=)
आज का विचार (दो भाग)	॥॥)	मिना-यात्रा	॥॥)
ब्रह्मचर्य (दो भाग)	१॥॥)	मैं भेद नहीं मानता	=॥॥)
गांधीजी ने कहा था (५ भाग)	१॥)	पाण्डवान-कहानी (दुः० १०१=)	
विनोदाजी की लिखी		गांधी की कहानी (दुः० १०१)	१)
दिनोया-विचार (२ भाग)	=)	भारत-विभाजन की कहानी	१)
गीता-प्रवचन	१॥)	एकदिवस में गांधीजी	=)
गान्धि-यात्रा	१॥)	बा, दासु और भार	१॥)
जीवन बीर शिक्षण	२)	गांधी-विचार-संग्रह	१॥॥)
स्थितप्रज्ञ-दर्शन	१)	गांधी अभिनन्दन दस	२१)
उपनिषदों का अध्ययन	१)	गांधी शताब्दि १९६०	३१)
ईसा सत्यवृत्ति	॥॥)	अज्ञान की शक्ति	(२०) १॥॥)

प्रार्थना (वियोगी हरि)	॥)	का० का इतिहास (२ भाग)	२०)
अयोध्याकाण्ड " "	१)	पंचदशी (सं० य० जैन)	११)
भागवत-धर्म (ह. उ.)	६॥)	सप्तदशी	२)
श्रेयार्थी जमनालालजी "	६॥)	रीड की हड्डी	११)
स्वतन्त्रता की ओर "	४)	अमिट रेखायें	३)
वापू के आश्रम में "	१)	एक आदर्श महिला	१)
मानवताके क्षरणे (भाव.)	१॥)	राष्ट्रीय गीत	१)
वापू (घ. विडला)	२)	तामिल-वेद (तिक्कुरल)	११)
रूप और स्वरूप "	११=)	आत्म-रहस्य	३)
डायरी के पन्ने "	१)	धेरी-गायाएं	११)
छू वोपाख्यान "	१)	बुद्ध और बौद्ध साधक	११)
स्त्री और पुरुष (टाल्स्टाय)	१)	जातक-कथा (आनंद की.)	२१)
मेरी मुक्ति की कहानी "	१॥)	हमारे गांव की कहानी	११)
प्रेम में भगवान "	२)	अन्नो की खेती	२)
जीवन-साधना "	११)	दलहन की खेती	१)
कलवार की करतूत "	१)	साग-भाजी की खेती	३)
हमारे जमाने की गुलामी "	१॥)	पशुओं का इलाज (प.प्र.)	११)
बुराई कैसे मिटे "	१)	रामतीर्थ-संदेश (३भाग)	१=)
बालकों का विवेक "	१॥)	रोटी का सवाल (क्रीपा०)	३)
हम करें क्या	३॥)	नवयुवको से दो बातें "	१=)
धर्म और सदाचार	११)	पुरुषार्थ (डा भगवान्दाम)	६)
अधरे में उजाला	१॥)	काश्मीर पर हमला	२)
भारत माधिश्री (वा. अग्रवाल)	३॥)	शिष्टाचार	११)
साहित्य और जीवन	२)	भारतीय मंस्कृति	३॥)
कब्ज (म० प्र० पोद्दार)	१)	आधुनिक भारत	५)
हिमालय की गोद में	२)	फलों की खेती	२१)
कहावतों की कहानिया	२)	मैं तन्दुरुस्त हूँ या बीमार	१॥)
राजनीति प्रवेशिका	१)	भा० नवजागरण का इतिहास	३)
जीवन-संदेश (ख जिज्ञान)	११)	गाधीजी की छत्रछाया में	२१)
अशोक के फुट	३)	भागवत-कथा	३॥)
शोकमान्य निलक	२॥)	जय अमरनाथ	१॥)
हमारा कानून	५)	प्रगति के पथ पर ६ पुस्तकें	१॥)
त्राति की भावना	२॥)	मंस्कृत-साहित्य-मीरम	
नृवागम गाथा-भार	१॥)	(२८ पुस्तकें) प्रति पुस्तक १=)	
हिन्दू की रानी	२)	ममाज-विक्रम-माला	
जीवन-प्रभाव	५)	प्रति पुस्तक १=)	

